श्रीमद् जवाहराचार्य सुगम पुस्तकमाला—१

● संयोजक-सम्पादक
डॉ० नरेन्द्र भानावत

● लेखक—
डॉ० नरेन्द्र भानावत, महावीर कोटिया

● प्रकाशक—
श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ,
समता भवन, रामपुरिया मार्ग,
बीकानेर (राजस्थान)

● प्रथम संस्करण : १९७९ (११०० प्रतियां)

● मूल्य : दो रुपया

मुद्रक—जैन आर्ट प्रेस, बीकानेर

प्रकाशकीय निवेदन

यह बडा सुखद सयोग है कि भगवान् महावीर के २५वें निर्वाण शताब्दी समारोह के समापन के साथ ही उन्ही के धर्मशासन के इस युग के महान् क्रांतिकारी युग-पुरुष श्रीमद् जवाहराचार्य का जन्म शताब्दी-समारोह मनाने का हमें सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा का जन्म स० १९३२ मे कार्तिक शुक्ला चतुर्थी को थांदला (म. प्र) में हुआ था। १६ वर्ष की अवस्था मे आपने जैन भागवती दीक्षा अगीकृत की और स० १९७७ में आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। स० २००० मे आषाढ शुक्ला अष्टमी को भीनासर (बीकानेर) मे आपका स्वर्गवास हुआ।

आचार्य श्री का व्यक्तित्व बडा आकर्षक और प्रभावशाली था। आपकी दृष्टि बडी उदार तथा विचार विश्वमैत्री-भाव व राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत थे। आपने राष्ट्रीय स्वतन्त्रता-आन्दोलन के सत्याग्रह, अहिंसक, प्रतिरोध, खादी-धारण, गोपालन, अछूतोद्धार, व्यसनमुक्ति जैसे रचनात्मक कार्यक्रमों मे सहयोग देने की जनमानस को प्रेरणा दी और दहेजप्रथा, बालविवाह, वृद्धविवाद, मृत्युभोज, सूदखोरी जैसी कुप्रथाओं के खिलाफ लोकमानस को जागृत किया। आपके राष्ट्रधर्मी क्रान्तदृष्टा व्यक्तित्व से प्रभावित होकर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, प० मदनमोहन मालवीय,

सरदार पटेल आदि राष्ट्रनेता आपके सम्पर्क में आये।

आप प्रखर वक्ता और असाधारण वाग्मी महापुरुष थे। 'जवाहर किरणावली' नाम से कई भागो मे प्रकाशित आपका प्रेरणादायी विशाल साहित्य राष्ट्र की अमूल्य निधि है। वह ओज, शक्ति और संस्कार–निर्माण का जीवन्त साहित्य है। इस साहित्य से प्रेरणा पाकर हजारों लोगो ने अपने जीवन का उत्थान किया है। ऐसे महान् ज्योतिर्धर आचार्य का साहित्य केवल जैन समाज की ही सम्पत्ति नहीं है, उसे विश्व–मानव तक पहुचना हमारा पुनीत कर्तव्य है।

इसी भावना से प्रेरित होकर जन्म-शताब्दी–वर्ष में हमने आचार्य श्री की प्रेरणादायी जीवनी तथा धर्म, समाज, राष्ट्रीयता, शिक्षा नारी-जागरण जैसे महत्त्वपूर्ण विषयो पर प्रकट किये गये, उनके विचारो को सुगम पुस्तकमाला के रूप में जन-जन तक पहुचाने का निर्णय लिया है। प्रस्तुत पुस्तक उसी योजना का एक अग है। इसी योजना के अन्तर्गत अन्य भाषाओ में भी कतिपय पुस्तको का प्रकाशन विचाराधीन है।

इस प्रकाशन–योजना को मूर्तरूप देने हेतु अखिल भारतीय स्तर पर सघ के अधीन गत वर्ष "श्री जवाहर साहित्य प्रकाशन निधि" स्थापित करने का निर्णय किया गया था। निर्णय के क्रियान्वयन मे श्रीयुत् जुगराज जी सा. घोका, मद्रास की प्रेरणा एव सक्रिय सहयोग विशेष उल्लेखनीय एवं उपयोगी रहा। संघ इसके लिए उनके प्रति

हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता है ।

इस योजना की क्रियान्विति में योजना के संयोजक-सम्पादक डा० नरेन्द्र भानावत व अन्य विद्वान् लेखकों का जो आत्मीयतापूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है, उसके लिए हम उनके हृदय से आभारी हैं ।

आशा है, यह सुगम पुस्तकमाला पाठको के चरित्र-निर्माण एवं वैचारिक उन्नयन मे विशेष प्रेरक सिद्ध होगी ।

गुमानमल चोरड़िया — भंवरलाल कोठारी

अध्यक्ष — मन्त्री

श्री अ० भा० साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर

लेखकीय वक्तव्य

भारतीय धर्म और दर्शन के इतिहास का यह एक रोचक तथ्य है कि जैन-परम्परा अविच्छिन्न रूप से अद्यावधि चली आ रही है। इसी गौरवमयी परम्परा मे आज से १०० वर्ष पूर्व सयम, साधना एवं ज्ञानज्योति को प्रज्वलित करने वाले युग-प्रवर्तक क्रान्तदर्शी आचार्य श्री जवाहरलाल जी म. सा. का जन्म हुआ। आपने धर्म को आत्मा का प्रकृत स्वभाव माना और आत्मकल्याण के साथ-साथ लोक-कल्याण व स्वस्थ समाज रचना का बुनियादी आधार मानते हुए युगीन सन्दर्भों में उसे व्याख्यायित किया। इससे धर्म का तेजस्वी रूप प्रकट हुआ और समाज तथा राष्ट्र को समानता तथा स्वतन्त्रता के पुनीत पथ पर निरन्तर आगे बढते रहने की प्रेरणा मिली।

यह बडी प्रसन्नता की बात है कि ऐसे महान् प्रतापी ज्योतिर्धर आचार्य का 'जन्म-शताब्दी महोत्सव' अखिल भारतीय स्तर पर तप, त्यागपूर्वक मनाया जा रहा है और इस उपलक्ष्य में श्री अ० भा० साधुमार्गी जैन सघ ने आचार्य श्री के जीवन-प्रसगों और उपदेशो से सर्वसाधारण को परिचित कराने के लिए 'श्रीमद् जवाहराचार्य सुगम पुस्तकमाला' योजना के अन्तर्गत कतिपय पुस्तकें प्रकाशित करने का निश्चय किया है। इसी योजना के अन्तर्गत प्रथम पुष्प के रूप मे यह पुस्तक पाठको के कर-कमलों मे सौंपते हुए हमें आनन्द की अनुभूति हो रही है।

यद्यपि आचार्य श्री का विस्तृत जीवन-चरित्र 'पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. की जीवनी' नाम से प्रकाशित हो चुका है परन्तु आज के युग में व्यस्त जीवन की जटिलता के कारण प्रत्येक व्यक्ति कम समय में अधिकाधिक जान लेने की इच्छा रखता है। इसी बात को ध्यान मे रखते हुए हमने इस पुस्तक के ६ अध्यायों में आचार्य श्री के जीवन की महत्वपूर्ण प्रेरक घटनाओं और लोकोपकारी व्यक्तित्व की प्रमुख विशेषताओं को सक्षेप मे उजागर करने का प्रयास किया है। यों आचार्य श्री का जीवन तो सुमेरु से भी अधिक ऊचा और समुद्र से भी अधिक गहरा है, उसे शब्दों की सीमा में बांधना सभव नहीं।

आशा है, आचार्य श्री के तेजस्वी जीवन, विलक्षण व्यक्तित्व और युगान्तरकारी महान् कार्यों की परिचायक यह पुस्तक पाठकों के लिए सतत मार्गदर्शक, वृत्तिपरिष्कारक और प्रेरणादायी सिद्ध होगी।

७ मार्च, १९७६ —नरेन्द्र भानावत
जयपुर (राज०) महावीर कोटिया

अनुक्रमणिका

परिशिष्ट

श्रीमत् जवाहराचार्य

जीवन और व्यक्तित्व

1. गृह-जीवन और वैराग्य

जन्म-भूमि । मालव-प्रदेश

भारतीय इतिहास मे मालवा का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है । इस प्रदेश की उज्जयिनी तथा धारा नगरी का नाम भारत के राजनैतिक व सांस्कृतिक जीवन मे अविस्मरणीय है । सम्राट विक्रमादित्य, राजा भोज, महाराजा उदयन, कवि-कुल-गुरु कालिदास आदि का नाम इस प्रदेश से जुड़ा हुआ है । भारत के आधुनिक राजनैतिक मानचित्र मे मालवा की यह शस्य श्यामल, वीर-भूमि मध्यप्रदेश राज्यान्तर्गत है । यह मध्यप्रदेश का पश्चिमी भू-भाग है ।

कस्बा थांदला

पश्चिमी मध्यप्रदेश मे आज का जिला केन्द्र झाबुआ, स्वतन्त्रता से पूर्व झाबुआ रियासत का केन्द्र नगर था । झाबुआ जिले मे थांदला नामक एक कस्बा है । नाग पर्वत के नाम से विदित विन्ध्याचल की

पश्चिमी पर्वतश्रेणियों ने इस कस्वे को अपनी गोद में समेट रखा है । कस्बे के पास से होकर "घोड़पुर नदी" बहती है । कस्बे के चारो ओर अधिकाशतः भीलो की ही वस्तिया है ।

माता-पिता

इसी कस्बे 'थांदला' को प्रसिद्ध जैनाचार्य श्री जवाहरलाल जी म. सा. का जन्म-स्थान होने का गौरव प्राप्त है । श्री जवाहरलाल जी के पितामह थे सेठ ऋषभदास, जाति ओसवाल जैन, कवाड गोत्रीय। उनके दो पुत्रों में छोटे पुत्र श्री जीवराज जी की धर्मपत्नी श्रीमती नाथीबाई की कुक्षि से जवाहरलाल जी ने जन्म लिया । नाथीबाई भी इसी कस्बे के एक अन्य प्रतिष्ठित परिवार से सम्बद्ध थी । वे धोका गोत्रीय सेठ श्रीचन्द जी के कनिष्ठ पुत्र श्री मोतीलाल की पुत्री थी ।

जन्म-कालीन परिस्थितियां तथा जन्म

श्रीमद् जवाहरचार्य का जन्म कार्तिक शुक्ला चतुर्थी वि० सवत् १९३२ तदनुसार सन् १८७५ में हुआ । यह वह समय था जब कि देश की स्वतन्त्रता के लिए किया गया भारतीयो का प्रथम प्रयास (१८५७ का राष्ट्रीय आन्दोलन) यद्यपि असफल हो गया था,

तथापि भारतीय की स्वतंत्र होने की आकाक्षा और अधिक वलवती हो उठी थी । देश के राजनीतिक जीवन मे गर्माहट के साथ ही सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक क्षेत्रो मे भी सुधारात्मक परिवर्तनो का दौर आरम्भ हो चुका था । दलित, पीडित और शोषित को उठाने की वात की जाने लगी थी । स्त्रियों को उनके समुचित अधिकार व सामाजिक प्रतिष्ठा दिलाने की माग होने लगी थी । हरिजनोद्धार के कार्यक्रम वनाए जाने लगे थे। इन सव परिस्थितियो का जवाहर-लाल जी के जीवन और कार्यों पर जो प्रभाव पडा, उसका उल्लेख आगे के पृष्ठो मे यथा-प्रसग किया गया है ।

मातृ-पितृ वियोग

श्री जवाहरलाल जी अपने माता-पिता की प्रथम सन्तान थे और वे ही उनके एकमात्र पुत्र थे । उनके एक वहिन थी, जिसका नाम था जड़ाववाई । जव आप दो वर्ष के अवोध शिशु थे, तभी आपकी माताजी का हैजे के प्रकोप से देहान्त हो गया । अभी आप पाच वर्ष के ही हो पाये थे कि पिता की छाया भी सिर से उठ गई । पाच वर्ष का यह अवोध वालक मातृ-हीन, पितृ-हीन होकर मामा श्री मूलचन्द जी

धोका के आश्रय में रहने लगा । मामा जी थादला कस्बे मे कपड़े की दूकान करते थे ।

विद्यालय प्रवेश

उन दिनों थांदला मे ईसाई मिशनरियों की ओर से एक प्राइमरी स्कूल चलता था। मामा मूलचद जी ने बालक जवाहर को उस विद्यालय मे विद्याध्ययन के लिए भेजा । परन्तु विद्यालय की पढ़ाई और वाता-वरण मे आपका मन नही लगा । फलतः आपने विद्यालय छोड़ दिया। विद्यालय से आपने हिन्दी तथा गुजराती भाषाएं तथा गणित का कुछ प्रारम्भिक ज्ञान ही प्राप्त किया ।

बाल्यावस्था की दो उल्लेखनीय घटनाएं

बालक जवाहर के इन दिनो से सम्बन्धित दो घटनाए उल्लेखनीय हैं । एक घटना जहा उनके धैर्य और साहस का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत करती है, वहीं दूसरी घटना प्रारब्ध के चमत्कार को स्वीकारने को बाध्य करती है ।

(१) विकट परिस्थिति में सूझबूझ और साहस

एक बार बालक जवाहरलाल एक बैलगाडी से कही जा रहे थे । रास्ता पहाड़ी था, फलतः टेढ़ा-मेढा

और ऊवड-खावड । कही-कही रास्ता वहुत तग भी था । पहाडी रास्ते के दूसरी ओर गहरी खाई थी । वैल जरा भी चूके कि प्राण सकट में । अतः गाड़ी पर सवार सभी यात्री उतर गये और पैदल चलने लगे, परन्तु वालक जवाहर को इस ऊवड-खावड रास्ते मे हिलती-डुलती चलती हुई गाडी की सवारी मे उल्टा अधिक आनन्द आ रहा था । अत. वे गाड़ीवान के साथ गाड़ी मे वैठे रहकर पहाडी यात्रा का आनन्द लेने लगे । क्या सकट आ सकता है, मानो इसकी ओर से वे निर्भय और मस्त थे । तभी गाडी पहाड़ी ढलाव पर आ गई । वैल भागने लगे । गाड़ीवान ने उन्हे वश मे करने का वहुतेरा प्रयत्न किया, परन्तु वैलो को न जाने क्या हो गया कि वे काबू से वाहर ही होते गए । गाडी की हालत ऐसी हो गई कि अव गिरी, अव उल्टी । भयभीत होकर गाड़ीवान वैलों की रास छोड कर नीचे कूद गया । अब तो वैल बिल्कुल स्वतन्त्र होकर और भी तेज दौड़ने लगे । इस आसन्न सकट मे वालक जवाहर ने वड़े साहस और प्रत्युत्पन्नमति से काम लिया । उन्होंने गाड़ीवान का स्थान ग्रहण कर वैलो की रास थाम ली और वैलों को रोकने का प्रयत्न किया । परन्तु प्रकृति को तो मानो उनके साहस और धैर्य की अभी परीक्षा लेनी थी । हुआ यह कि

बैलों को रोकने के प्रयत्न में उन्हें एक जोर का धक्का लगा और वे गाड़ी के जुए पर आ गिरे । भाग्य से रस्सी हाथों से छूटी नही । वे उसे पकडे-पकड़े ही जुए से लटक गए । अब हालत यह थी कि या तो गिर कर गाड़ी से कुचल जाना अथवा किसी खड्डे मे गिर कर हड्डी-पसली का चकनाचूर हो जाना । पर बालक जवाहर ने इस संकट में अगाध धैर्य, असीम साहस और गहरी सूझ-बूझ का परिचय दिया । तनिक भी घबराहट उन्होंने न आने दी । वे स्थिर चित्त बैलो की रास और गाडी के जुए को पकड़े रहे । धीरे-धीरे ढलान कम होने लगी और बैल भी प्रकृतिस्थ हो गये । इस प्रकार साहस और स्थिर-चित्तता के बल पर उन्होने अपनी प्राणरक्षा की । वे प्रकृति की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए ।

(२) जाको राखे साइयां

प्रकृति का रहस्य मनुष्य के लिए सदा अबूझा रहा है । कतिपय घटनाए ऐसी घट जाती है कि उनका अनुमान ही नही लगाया जा सकता । ऊपर जिस घटना का उल्लेख किया गया है, वहा मनुष्य के अदम्य साहस के सामने प्रकृति को ही मानो झुकना पड़ा था । परन्तु एक दूसरी घटना उनके बाल-जीवन से संबन्धित और है जो इस तथ्य की ओर सकेत करती है कि

मनुष्य प्रकृति के रहस्य को कभी नही पा सकता ।

एक बार बालक जवाहर अपने किसी बाल-साथी के साथ बातचीत मे लीन थे । बातो मे कितना समय व्यतीत हो गया, कुछ ध्यान नही । पर प्रारब्ध की अद्भुत लीला कि बातचीत करके जैसे ही वे हटे, पास की दीवार गिर पडी । वे लोग दीवार के पास खडे होकर ही बात कर रहे थे । दीवार ऐसे गिरी, जैसे मानो वह इन्तजार ही कर रही थी कि कब ये हटें और कब मैं गिरू ? इसलिए यह विश्वास करना ही पडता है कि मारने वाले से जिलाने वाला बड़ा है । जब तक जीवन लिखा है, कोई कुछ नही बिगाड सकता और मृत्यु आने पर फिर एक क्षण भी जीने को मिलता नही । अतः मनुष्य को प्रमाद से बच कर अपने प्रत्येक क्षण का अच्छे कार्यों मे सदुपयोग करना चाहिए । अच्छे कार्य अर्थात् समग्र मानवता के कल्याण का प्रयत्न, मानवता ही क्यो, प्राणीमात्र के कल्याण से प्रेरित होकर जीवन का सदुपयोग करना ही मनुष्य का कर्त्तव्य है । श्री जवाहरलाल जी का पुण्य-चरित्र भी एक ऐसे ही महात्मा का जीवन-चरित्र है, जिन्होने अपना सम्पूर्ण जीवन प्राणिमात्र के कल्याण के लिए अर्पित किया । इसीलिए वे हमारे प्रेरणा-केन्द्र हैं ।

बैलों को रोकने के प्रयत्न में उन्हे एक जोर का धक्का लगा और वे गाड़ी के जुए पर आ गिरे । भाग्य से रस्सी हाथो से छूटी नही । वे उसे पकडे-पकडे ही जुए से लटक गए । अब हालत यह थी कि या तो गिर कर गाड़ी से कुचल जाना अथवा किसी खड्डे मे गिर कर हड्डी-पसली का चकनाचूर हो जाना । पर बालक जवाहर ने इस संकट मे अगाध धैर्य, असीम साहस और गहरी सूझ-बूझ का परिचय दिया । तनिक भी घबराहट उन्होने न आने दी । वे स्थिर चित्त बैलों की रास और गाडी के जुए को पकड़े रहे । धीरे-धीरे ढलान कम होने लगी और बैल भी प्रकृतिस्थ हो गये । इस प्रकार साहस और स्थिर-चित्तता के बल पर उन्होंने अपनी प्राणरक्षा की । वे प्रकृति की परीक्षा मे उत्तीर्ण हुए ।

(२) जाको राखे साइयां

प्रकृति का रहस्य मनुष्य के लिए सदा अबूझा रहा है । कतिपय घटनाएं ऐसी घट जाती है कि उनका अनुमान ही नही लगाया जा सकता । ऊपर जिस घटना का उल्लेख किया गया है, वहा मनुष्य के अदम्य साहस के सामने प्रकृति को ही मानो झुकना पड़ा था । परन्तु एक दूसरी घटना उनके बाल-जीवन से सबन्धित और है जो इस तथ्य की ओर सकेत करती है कि

मनुष्य प्रकृति के रहस्य को कभी नही पा सकता ।

एक बार बालक जवाहर अपने किसी बाल-साथी के साथ बातचीत मे लीन थे । बातो मे कितना समय व्यतीत हो गया, कुछ ध्यान नही । पर प्रारब्ध की अद्भुत लीला कि बातचीत करके जैसे ही वे हटे, पास की दीवार गिर पडी । वे लोग दीवार के पास खडे होकर ही बात कर रहे थे । दीवार ऐसे गिरी, जैसे मानो वह इन्तजार ही कर रही थी कि कब ये हटें और कब मैं गिरू ? इसलिए यह विश्वास करना हो पडता है कि मारने वाले से जिलाने वाला बड़ा है । जब तक जीवन लिखा है, कोई कुछ नही बिगाड सकता और मृत्यु आने पर फिर एक क्षण भी जीने को मिलता नही । अतः मनुष्य को प्रमाद से बच कर अपने प्रत्येक क्षण का अच्छे कार्यों मे सदुपयोग करना चाहिए । अच्छे कार्य अर्थात् समग्र मानवता के कल्याण का प्रयत्न, मानवता ही क्यो, प्राणीमात्र के कल्याण से प्रेरित होकर जीवन का सदुपयोग करना ही मनुष्य का कर्त्तव्य है । श्री जवाहरलाल जी का पुण्य-चरित्र भी एक ऐसे ही महात्मा का जीवन-चरित्र है, जिन्होने अपना सम्पूर्ण जीवन प्राणिमात्र के कल्याण के लिए अर्पित किया । इसीलिए वे हमारे प्रेरणा-केन्द्र हैं ।

सांसारिक जीवन से उदासीनता

ग्यारह वर्ष की छोटी सी अवस्था में जवाहर-लाल जी स्कूल छोड कर अपने मामाजी के साथ कपडे की दूकान पर बैठने लगे । उन्होने पूर्ण मनोयोग से अपने आपको इस धन्धे मे लगा दिया । परन्तु भविष्य किसने देखा है? कुछ घटनाएं ऐसी घट जाती हैं जो एकाएक जीवन को बदलने का कारण बन जाती है। दुर्भाग्यवश कुछ ही समय बाद जब जवाहरलाल जी की अवस्था मात्र तेरह वर्ष की थी, उनको स्नेहपूर्ण आश्रय देने वाले मामा श्री मूलचन्द जी धोका भी तेतीस वर्ष की अल्प आयु मे हो इस ससार से चल बसे ।

मामाजी के असामयिक निधन ने किशोर वय जवाहर का मन उद्वेलित कर दिया । बचपन मे ही माता-पिता की गोद से वे वचित हो गए थे और अभी ठीक तरह होश सभाल भी न पाए थे कि मा-बाप का प्यार देने वाले मामा का साया भी उन पर से उठ गया । मामा अपने पीछे विधवा पत्नी और पांच वर्ष के एकमात्र पुत्र को छोड़ गए थे। इनके पालन-पोषण का उत्तरदायित्व भी अब जवाहरलाल जी पर आ पड़ा । जवाहरलाल जी इस उत्तरदायित्व के कारण

दूकान का काम अवश्य करते थे पर वे अब ससार से कुछ उदासीन से रहने लगे । सासारिक जीवन की दु ख-बहुलता ने उनको झकझोर दिया । जीवन की नश्वरता का साकार रूप बार-बार उनकी आखो के सामने नाचने लगा । जीवन मिथ्या है, यह धन-धान्य सम्पत्ति सब यही रह जानी है, ये सब परायी हैं, इनका मोह झूठा है । ससार का वैभव-विलास जीवन की सफलता की कसौटी नही है—इस तरह के विचार अब उनके मन-मस्तिष्क मे घूमते रहते । लगातार ऐसे ही विचारो के चिन्तन-मनन का परिणाम यह हुआ कि वे दिन-प्रतिदिन वैराग्योन्मुख होने लगे । जिस दूकान को उन्होने बडी लगन और निष्ठा से चलाया था, अब उसमे उनका मन नही लगता था । उन्होने दूकान उठाने का निश्चय कर लिया । धीरे-धीरे काम समेटना प्रारम्भ किया तथा लेन-देन चुकता करने लगे ।

कर्त्तव्य-बोध की उलझन

इस प्रकार मन से विरक्त किशोर जवाहरलाल ने अब वैराग्य लेने का मन ही मन निश्चय कर लिया । उन्होने सोच लिया था कि यह संसार एक धर्मशाला है । आज नही तो कल, मुझे इसे छोड कर महाप्रस्थान

के लिए जाना होगा । फिर समय रहते सांसारिक जीवन के माया-जाल से क्यो न मुक्त हो जाऊ ? पर जितना ही वे वैराग्य ग्रहण करने की बात सोचते, स्वर्गीय मामाजी के परिवार के प्रति कर्त्तव्य की बात सामने आ जाती । वे सोचते, मामाजी के मेरे प्रति कितने उपकार रहे हैं और मैं विधवा असहाय मामी तथा उनके पाच वर्षीय पुत्र को अकेला, निस्सहाय छोड कर वैराग्य लेना चाहता हूँ, यह कहा तक उचित है ? जितना ही वे इस सम्बन्ध मे सोचते, उतना ही वे विचारो के खो जाते । परन्तु विधि का विधान तो कुछ ओर ही था ।

उलझन से छुटकारा और साधु-संगति

एक दिन वे इसी तरह के विचारो मे खोए थे। पाच वर्ष का ममेरा भाई उनके साथ ही लेटा हुआ था । विचारो मे द्वन्द्व चल रहा था । तभी उनके अन्तर्मन मे प्रश्न उठा—जव मैं पाच वर्ष का था, तव क्या हुआ ? इस प्रश्न ने एकाएक ही उनकी समस्या का समाधान कर दिया । वे सोचने लगे, जब मैं दो वर्ष का था, मा की ममताभरी गोद छूट गई, जब पाच वर्ष का हुआ, पिता ससार से चल बसे । उस समय कौन रह गया था मुझे पालने वाला ? पर

मामा-मामी ने जिस अपनत्व से अपनाया, उसने माता-पिता की पूर्ति कर दी । ससार मे हर शिशु अपना भाग्य लेकर आता है । मनुष्य अपने को दूसरे का पालन करने वाला मान कर अपना अहकार ही बढाता है । वस्तुत पालनहारा कोई और है । मनुष्य क्या किसी का भाग्य-विधाता हो सकता है ? इस बालक का भी अपना भाग्य है । अगर भाग्य विपरीत है तो मेरा ही आश्रय स्थायी रूप से इसे कैसे मिल सकता है ? मेरी कल ही मृत्यु हो जाय तो क्या इसका पालन ही नही होगा ? छि मैं भी कैसे मिथ्या भ्रम मे पडा हुआ था । इन विचारो के आते ही उनकी दुविधा दूर हो गई । वैराग्य ग्रहण करने के निश्चय को वल मिला, परन्तु उन्होने अपना मन्तव्य तुरन्त किसी पर प्रकट नही किया । धर्म-ध्यान की ओर अपनी रुचि को वढाते गए । अधिकाधिक समय ज्ञान-ध्यान मे लगाने लगे ।

सयोग से उन्ही दिनों वहा श्री राजमल जी महाराज के शिष्य मुनि श्री घासीलाल जी तथा मगन-लाल जी और श्री घासीलाल जी महाराज के शिष्य श्री मोतीलाल जी व देवीलाल जी पधारे हुए थे । जवाहरलाल जी ने इस अवसर का पूरा लाभ उठाया । वे प्रतिदिन उनका प्रवचन मुनते तथा अधिकाधिक

साधु-संगति मे रहने का प्रयास करते । मुनि-जीवन धारण करने का उनका सकल्प दृढ से दृढतर होता ही गया ।

वैराग्य-ग्रहण का निश्चय तथा बाधाएं

जवाहरलाल जी मानसिक रूप से वैराग्य ग्रहण करने को पूर्णरूप से तैयार हो चुके थे । दृढ निश्चय के साथ उन्होने अपने विचार अपने ताऊजी श्री धनराज जी (उनके पिता के बड़े भाई) के समक्ष रखे और उनसे मुनि-दीक्षा लेने की आज्ञा मागी । धनराज जी को उनके विचार सुन कर कुछ आश्चर्य और दु ख हुआ । उनका विचार हुआ कि यह अभी नादान बालक है, समझ अभी है नही, सो साधुओ के बहकाने मे आ गया है । डाट-फटकार से यह रास्ते पर आ जाएगा । अतः धनराज जी ने उन्हे डाटा-फटकारा तथा साधुओं के पास उनका आना-जाना बन्द कर दिया । इस बात की देखभाल के लिए उन्होने अपने दो लड़कों को सदा जवाहरलाल जी के साथ रहने का निर्देश दिया । धनराज जी का अपने लड़कों को कठोर निर्देश था कि कोई न कोई हमेशा इसके साथ बना रहे तथा इसे साधुओ के पास न जाने दे । इस प्रतिबन्ध के कारण कुछ ससय के लिए जवाहरलाल जी का साधुओ के

पास आना-जाना बन्द रहा। परन्तु इस तरह के प्रतिबन्धो से क्या अटल निश्चय बदले जा सके है ? दृढ निश्चयी सोच-विचार कर अपना मार्ग चुनते हैं और फिर उस पर दृढ रहते हैं। चाहे कैसी भी बाधाएं आए, कितनी ही कठिनाइयां आ पड़े, कितने भी प्रलोभन उन्हे दिए जाए, वे अपना लक्ष्य नही छोडते। जवाहरलाल जी भी ऐसे ही दृढ़-निश्चयी, विशिष्ट व्यक्तित्व के धनी थे।

धनराज जी ने देखा कि जवाहर पर साधुओ का रग गहरा चढ चुका है। साधुओ के पास जाने का प्रतिबन्ध होने पर भी इसके विचारों मे कोई परिवर्तन नही आया है तो इन्होंने एक अन्य तरीका अपनाया। इन्होंने अपने मिलने-जुलने वाले तथा सभी सगे-सम्बन्धियों से यह कहा कि वे जब भी कभी इससे मिलें तो इसके सामने सदा साधुओं की निन्दा करें। उसे साधुओ का भय दिखाएं तथा साधुओं को भयंकर रूप मे चित्रित करें। सम्भवतः इससे इसके विचारो में कुछ परिवर्तन हो। इसके बाद से जवाहरलाल जी को बड़े-छोटों के मुख से प्रायः इस तरह के [illegible] सुनने को मिलते—"बेटा! तुम इन साधुओं के [illegible] मे कभी मत फंसना। ये कोमल-मति [illegible] बहका कर ले जाते हैं। फिर उनसे [illegible]

काम कराते हैं । उन्हें अपने अनुकूल बनाने के लिए मारते-पीटते है तथा तरह-तरह से तग करते है । उन्हे भूखा-प्यासा रखते हैं और यदि कोई लडका इनकी बात नही मानता है तो भयकर जगलो मे उसे अकेला छोड देते है ।" आदि आदि ।

जवाहरलाल जी बिना कुछ कहे, ये सब बातें सुनते रहते । परन्तु इन सबसे उनके निश्चय में कोई परिवर्तन नही हुआ । वैराग्य की चाह घटने की अपेक्षा और अधिक बढती गई । यह चाह आत्मजनित थी । जिस व्यक्ति मे आत्म-ज्ञान का दीपक प्रज्वलित हो गया है, उसे दुनियादारी का ज्ञान भुलावे मे नही डाल सकता । जवाहरलाल जी मे आत्म-ज्ञान की यह ज्योति प्रज्वलित हो गई थी । फिर उन्हे अपने सोच-विचार कर लिए गए निर्णय से भला कौन विमुख कर सकता था ?

धनराज जी किसी भी तरह इसी प्रयत्न मे थे कि जवाहर अपना निश्चय छोड बैठे । उन्होने डराने-धमकाने, प्रलोभन देने आदि के सभी प्रयत्न किए, पर जवाहरलाल तो मानो ऐसे चिकने घडे तुल्य हो गए थे कि जिस पर किसी भी प्रकार के बाधा रूपी जल-कण फिसल कर बह जाते थे ।

कस्बा लींबड़ी को पलायन तथा साधु-सान्निध्य

पर रास्ते में लुटने आदि का भी भय था। जवाहर-लाल जी तथा उदयराज जी दोनों दाहोद के लिए रवाना हुए। जैसा कि लिखा जा चुका है, जवाहरलाल जी उस समय पन्द्रह वर्ष के थे तथा उनके चचेरे भाई उदयराज जी सत्तरह वर्ष के। गाड़ीवान भी इनके अनुरूप छोटी ही उम्र का था।

मार्ग मे अनास नाम की एक पहाड़ी नदी पड़ती थी। इस नदी मे वर्षाकाल मे तो जल बहता, अन्यथा वह सूखी रहती थी। परन्तु उसकी तलहटी मे पत्थरों की बहुलता थी। अनास नदी तक पहुचते-पहुचते सूर्यास्त हो गया था तथा अन्धेरा बढने लगा था। गाडी नदी में उतर गई थी, परन्तु ऊपर चढना मुश्किल हो गया। तीनो ने मिल कर बहुत प्रयत्न किया परन्तु बैल तो जैसे थक ही चुके थे। वे ऊपर चढ ही नही सके। बड़ी भयानक स्थिति थी। रात्रि का गहरा अन्धकार और गहराता जा रहा था। आस-पास सहारे की कोई आशा नही। सुनसान स्थल, गहरा जंगल, पथरीला मार्ग। उदयराज जी और गाडीवान तो इतने घबरा गए कि जोर-जोर से रोने लगे। परन्तु निडर व साहसी जवाहरलाल ऐसी विपत्ति में घबराने वाले थोडे ही थे? विपत्ति के सम्बन्ध में उन्होने अपने विचार बाद मे इस रूप में व्यक्त किए—

विपत्ति को सम्पत्ति के रूप मे परिणत करने का एकमात्र उपाय यह है कि विपत्ति से घबराना नही चाहिए । विपत्ति को आत्म-कल्याण का एक श्रेष्ठ साधन समझकर, विपत्ति आने पर पुरुषार्थ-रत रहते हुए प्रसन्न रहना चाहिए।

कालान्तर मे व्यक्त अपने इन विचारो की प्रति-पूर्ति वे स्वय थे । उस सकट को घडी मे अपने दोनो साथियो को रोते देख वे स्वय शान्त व स्थिर-चित्त रहे और उनको धैर्य बधाया। उनको वही छोड, रात्रि के अन्धकार मे वे अकेले ही पास की एक भील बस्ती मे सहायता प्राप्त करने की आशा से गए । उस बस्ती मे गुलजी तडवी नामक एक भील युवक उनका परि-चित था । वे उसके पास पहुचे और १०-१५ भीलों को साथ लेकर लौटे । उनके प्रयत्नो से गाडी को बाहर निकाला गया। रात्रि मे वही विश्राम कर दूसरे दिन ये लोग दाहोद पहुचे। इस घटना से भी जवाहर-लाल जी के साहस और धैर्य का अच्छा परिचय मिलता है। वे प्रकृति से ही सम्यक्त्व का पालन करने वाले जीव थे । ऐसा व्यक्ति दुःख-सुख, विपत्ति-सम्पत्ति, हानि-लाभ, सभी को समान भाव से ग्रहण करता है। सब परिस्थितियो मे वह अविचल रहता है । सच्चे साधुत्व के लिए यह प्राथमिक पहचान है । जवाहर-

लाल जी इस कसौटी पर प्रारम्भ से ही खरे थे। साधुत्व उनके स्वभाव मे था।

सरपंच का पत्र : थांदला लौटा लाने की चाल

दाहोद का काम समाप्त कर जब उदयराज जी थादला अकेले लौटे, तब धनराज जी को ज्ञात हुआ कि जवाहर लीवडी मे मुनिराओ के सान्निध्य मे पहुच गया है। उन्होने जान लिया कि पक्षी पीजरे से निकल चुका है, उसे पुन: लौटा लाने के लिए अब कोई बहाना सोचना होगा। उन्हे एक उपाय सूझा। उन्होने थादला के तत्कालीन सरपच शाहजी प्यारचद से एक पत्र जवाहरलाल जी को लिखवाया। पत्र मे कहा गया था कि तुम थादला लौट आओ। तुम्हे दीक्षा की आज्ञा दिलवाने की जिम्मेदारी मुझ पर है। इस पत्र को पढ कर जवाहरलाल जी बडे प्रसन्न हुए। उन्हे विश्वास हो गया कि अब उन्हे दीक्षा की आज्ञा अवश्य प्राप्त हो जाएगी। अत वे धनराज जी के साथ, जो स्वय पत्र लेकर उन्हे लौटा लिवाने के लिए लीबडी गए थे, थादला लौट आए।

परन्तु धनराज जी ने तो यह एक चाल चली थी। वे जवाहरलाल को दीक्षा की अनुमति नही देना चाहते थे। एक बुजुर्ग और सरक्षक के कर्त्तव्य को ध्यान मे रखते हुए सभवतः उनका यह विचार रहा

होगा कि अभी यह नादान बालक है। अपना भला-बुरा समझता नही है। दुनियादारी से अभी अनभिज्ञ है। साधु बनने की भावना इसकी आत्म-प्रसूत नही हो सकती। यह बहकावे मे आ गया है। साधुत्व के सयम का निर्वाह सरल नही है। अत मेरा कर्त्तव्य यही है कि इस अबोध तथा भोले किशोर का सही मार्ग-दशन करू। इसीलिए येन-केन प्रकारेण वे जवाहरलाल जी को वैराग्य लेने से विरत करने का प्रयत्न करते रहे। डराना, धमकाना, प्रलोभन आदि सभी तरीके उन्होने अपनाए। फलत जवाहरलाल को थादला लौटा लाने के बाद वे उन्हे दीक्षा की अनुमति देने से बिलकुल इनकार कर गए। जवाहरलाल जी का सहारा अब थादला के सरपच शाहजी प्यारचद रह गए। वे उनके पास पहुचे और उनसे दीक्षा की अनुमति दिलाने को कहा। परन्तु वे बोले, "मैंने तुम्हारे बाबाजी (ताऊजी धनराज जी, जिन्हे जवाहरलाल जी बाबा कहते थे) को खूब समझाया मगर वे आज्ञा देने को तैयार नही होते। मैं क्या जानता था कि वे इस तरह पलट जाएगे? उनकी लिखत मेरे पास होती तो कुछ कार्यवाही भी करता, मगर ऐसा कुछ है नही। जितना कह सकता था कह चुका, उन्हे समझा चुका। अब क्या हो सकता है?"

सरपंच की यह लाचारी देख कर जवाहरलाल जी को बड़ी निराशा हुई, परन्तु वे भी अवसर का इन्तजार करने के अतिरिक्त क्या कर सकते थे? उनका सकल्प दृढ था, मात्र अवसर की प्रतीक्षा थी।

गृह – त्याग

जवाहरलाल जी किसी भी तरह थादले से निकल कर लीवडी साधुओं के सान्निध्य मे पहुच जाना चाहते थे। वैराग्य ग्रहण करने का उनका निश्चय अडिग था। अतः उन्होने रास्ता निकाल ही लिया। यह उनका अन्तिम पलायन था, लक्ष्य प्राप्ति की ओर सफल कदम था।

थादला मे भैरा नामक एक धोबी था। उसके पास एक घोड़ा था। वह घोड़े को किराये पर भी चलाने का धन्धा करता था। जवाहरलाल जी ने उससे चुपचाप बाते की और पाच रुपये मे उसे लीबडी पहु-चाने के लिए तय कर लिया। किसी को पता न चले, इसलिए यह निश्चित किया गया कि भैरा अपना घोडा लेकर गांव से अकेला निकल जाएगा और नौगांवा नदी पर दोपहर तक पहुच कर उनके वहा पहुंचने की इन्तजार करेगा। निश्चयानुसार भैरा नदी पर पहुच-कर इन्तजार करने लगा। इधर जवाहरलाल चुपचाप

अवसर देख कर गांव से निकले तथा अपने गन्तव्य के लिए चल दिए। भैरा वहा इन्तजार कर ही रहा था। वहा से घोड़े पर सवार होकर आप लीवड़ी के लिए चल दिए।

लीवडी पहुचते के दो मार्ग थे। एक मार्ग सीधा तथा कम समय वाला था, परन्तु खतरनाक था। रास्ते मे पहाड तथा जगल थे। जंगली जानवरो का भी डर था। घोबी उस रास्ते से जाने को तैयार नही था। फलतः दूसरे रास्ते से होकर जाना पड़ा। यह रास्ता थोडा फेर खाकर था, अत लम्बा था, परन्तु निरापद था।

जब जवाहरलाल जी लीबडी पहुंचे तो उनके ताऊजी श्री धनराज जी वहां पहले ही मौजूद थे। वे खतरे की परवाह न करके सीधे मार्ग से ही वहा पहुंच गए थे। धनराज जी ने जवाहरलाल जी को सब प्रकार से समझाने मे कोई कसर बाकी नही रखी, परन्तु जवाहरलाल जी अपने निश्चय पर अडिग रहे। डराने-धमकाने, बहलाने-फुसलाने, अपनी असमर्थता तथा लाचारी बतलाने आदि के सभी उपाय निरर्थक रहे। हार कर श्री धनराज जी निराश मन थांदला लौट आए।

जवाहरलाल जी ने लीबडी मे रह कर साधुत्व का अभ्यास प्रारम्भ कर दिया। उन्होने अपना रहन-सहन, खान-पान सभी साधुओं की तरह कर लिया। प्राय: आप स्वाध्याय मे रत रहते। लगभग आठ माह तक उनका यह क्रम चलता रहा फिर भी श्री धनराज जी उनको साधु-दीक्षा लेने की आज्ञा देने को प्रस्तुत नही हुए। तब जवाहरलाल जी ने अपने सगे-सम्बन्धियो को इस सम्बन्ध मे पत्र लिखेतथा पत्रो में यह भी उल्लेख किया कि या तो आप लोग आग्रह करके मुझे बाबाजी से दीक्षा लेने की आज्ञा दिलवावें अन्यथा मुझे लाचार होकर किसी अज्ञात स्थान को चला जाना पड़ेगा और फिर कभी थादला आना सम्भव नही होगा। इस पत्र के मिलने से सभी सम्बन्धीगण चिन्ता में पड़ गए। आखिर जाति के प्रतिष्ठित पुरुषों व सम्बन्धियों की एक पंचायत हुई, जिसमें पंचों ने श्री धनराज जी से आग्रह किया कि वे इस परिस्थिति मे जवाहरलाल को मुनि-दीक्षा लेने की आज्ञा दे दे।

मुनि दीक्षा की आज्ञा

धनराज जी सभी तरह के प्रयत्न करके थक

चुके थे। अज्ञात स्थान मे चले जाने की धमकी से वे भी अधिक विचलित हो गए। उन्होंने सोचा, जवाहर का निश्चय अब बदल नही सकता। किसी अज्ञात स्थान मे चला गया तो उसको देखना भी दुर्लभ हो जाएगा। अत अच्छा यही है कि मैं इसे आज्ञा दे दू। अन्यथा वह मानता तो है नही। अतः सब प्रकार से सोच विचार कर श्री धनराज जी आज्ञा देने को तैयार हो गए। वही पचायत मे आज्ञा-पत्र तैयार किया गया और श्री जवाहरलाल जी के पास एक पत्र भेज दिया गया जिसमे उल्लेख था कि 'आपको दीक्षा लेने की आज्ञा दी जाती है।'

दीक्षा सस्कार

आज्ञा-पत्र पाकर जवाहरलाल जी की प्रसन्नता का पारावार नही रहा। शुभस्य शीघ्रम्। अत मार्ग-शीर्ष शुक्ला द्वितीया वि० स० १९४८ को ही दीक्षा धारण करने का मुहूर्त निश्चित किया गया। तत्संबंधी आमन्त्रण-पत्र भेजे गए। बाहर से अनेक धर्म-प्रेमी सज्जन एकत्रित हुए। निश्चित शुभ-मुहूर्त मे श्री जवाहरलाल जी ने जैन भागवती दीक्षा अगीकार की। आप श्री मगनलाल जी महाराज के शिष्य बने। श्री

हुक्मीचन्द्र जी महाराज के सम्प्रदाय के मुनि श्री घासी-लाल जी महाराज (बड़े) ने आपके दीक्षा संस्कार पूर्ण कराए। जवाहरलाल अब मुनि जवाहरलाल बन गए थे। उनकी चिर अभिलाषा पूर्ण हुई। इस प्रकार सोलह वर्ष की अवस्था में सांसारिक-जीवन का त्याग कर वे वैराग्य-मार्ग के पथिक बन गए।

२. मुनि-दीक्षा

युवा साधक

सोलह वर्ष की अल्पायु मे आत्म-साधना के पथ पर बढ कर नवयुवक जवाहरलाल ने असीम धैर्य, दृढ निश्चय, कठोर सयम और कष्ट-सहिष्णुता का परिचय दिया। थादला का यह नवयुवक, जो अब तक कुछ लोगो का ही आत्मीय था, अब मुनि जवाहरलाल के नए रूप मे प्राणिमात्र का अपना था और प्राणिमात्र उनके अपने थे।

साधु ज्ञानमार्ग का पथिक होता है। सत्य को समझना और उसको जन-जन तक पहुचाना, उसका प्राथमिक कर्तव्य है, धर्म है। इसलिए साधु को अध्ययन, मनन और चिन्तन का सतत अभ्यासी होना चाहिए। जैन-साधु परम्परा मे इस पक्ष को प्रारम्भ से ही

महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है । तदनुसार नव-दीक्षित साधु को पहले शास्त्र-ज्ञान मे पारगत किया जाता है ।

मुनिश्री जवाहरलाल ने अपने गुरु श्री मगनलाल जी महाराज से शास्त्रो का अध्ययन आरम्भ किया । प्रतिभाशाली होने के कारण वे शीघ्र ही शास्त्रीय विषय की गहराई में प्रवेश कर गये । स्मरण-शक्ति की तीव्रता के कारण शास्त्रो की अनेक गाथाएं और पाठ उन्हे कठस्थ हो गये । लगन, सयम, मन की एकाग्रता, सेवा-भावना, विनम्रता आदि गुणो के कारण मुनि जवाहरलाल सभी साधुओ के प्रिय बन गये ।

गुरु – वियोग

मुनि जवाहरलाल को दीक्षित हुए मुश्किल से डेढ माह हो हुआ था कि उनके गुरु श्री मगनलाल जी महाराज का पेटलावद मे स्वर्गवास हो गया । नव-दीक्षित मुनि के लिए यह बहुत बडी क्षति थी । थोडे से समय के सम्पर्क ने ही मुनि जवाहर को अपने गुरु के अत्यन्त निकट ला दिया था । गुरु के असामयिक निधन ने उनके मानस को झकझोर दिया और ससार की असारता को पुनः उनके सामने साकार कर दिया । अब किसी काम में उनका मन नही लगता था । वे प्रायः एकान्त मे बैठ कर सोचते रहते ।

चित्त-विक्षेप

इस घटना का उनके मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा असर पडा । उनका चित्त विक्षिप्त हो गया । वड़ी अद्भुत स्थिति आ पडी । यह समाचार ज्ञात कर उनके ताऊजी श्री घनराज जी उनको घर लिवा ले जाने के लिए आए । इस कठिन समय मे मुनि श्री मोतीलाल जी महाराज ने वड़े धैर्य का परिचय दिया। उन्होने घनराज जी को समझाया तथा मुनि श्री जवाहरलाल को पूरा तत्परता से सभाला ।

विक्षिप्ति की स्थिति अविश्वसनीय होती है । विक्षिप्त के मन और मस्तिष्क का कोई भरोसा नही रहता । वह कव क्या करने की सोच वैठे, कुछ कहा नही जा सकता । मुनि श्री जवाहरलाल जी भी कभी जीवन का अन्त करने की वात सोचते, कभी अकेले जगल मे जाकर तपस्या करने की वातें करते, कभी अपने साथी साधुओ तथा दर्शनार्थी श्रावको के प्रति भय तथा अविश्वास का भाव रखते, कभी चुपचाप वैठ कर सोचते रहते, वडे साधु खड़े होने को कहते तो खडे हो जाते और चलने को कहते तो चल पडते । यह पक्ति 'अरिहत देव नेडे, जीने तीन भुवन मे कुण छेडे' प्राय ऊचे स्वर से उच्चारण करते और इसमे लीन हो जाते ।

इस पूरे समय में मुनि श्री मोतीलाल जी महाराज ने बड़े धैर्य, स्नेह और सेवा-भावना के साथ युवा मुनि को सम्भाला।

स्वास्थ्य लाभ

युवा मुनि के इलाज के लिए धार के भक्त श्रावक पन्नालाल जी के प्रयास स्तुत्य है। उन्होने पहले आयुर्वेदिक वैद्यो के इलाज की व्यवस्था की परन्तु जब इसका सुपरिणाम नही निकला तो ऐलोपैथिक चिकित्सा-पद्धति का आश्रय लिया गया। डाक्टरो ने सिर के पिछले भाग मे प्लास्टर लगाया। प्लास्टर लगाने के स्थान पर के गहरे और घुघराले बालों का युवा मुनि ने स्वयं लोच किया। सिर मे से लगभग तीन सेर पानी निकला। वे बेहोश हो गए। अशान्ति और कमजोरी बढ गई। परन्तु धीरे-धीरे स्वास्थ्य लाभ होने लगा और आपकी मानसिक अस्वस्थता भी ठीक हो गई।

मानसिक अस्वस्थता का मूल-भय

कालान्तर में मुनिश्री ने इस घटना पर विचार करते हुए 'भय' की भावना को इस अस्वस्थता का मूल कारण वताया। वचपन मे 'भूत' का डर उनके

अन्तर्मन में वहुत गहरा समा गया था । फिर माता, पिता, मामा आदि की असामयिक मृत्यु का वहुत छोटी-सी अवस्था मे साक्षात्कार करने वाले उस बालक के मन मे भय गाढा होता गया । भूत के ये सस्कार दीक्षा लेने के वाद भी वने रहे थे । अतः जब दीक्षा के डेढ मास वाद ही दीक्षा गुरु श्री पन्नालाल जी का देहावसान हुआ तो युवा मुनि पर कुछ ऐसा मानसिक दवाव पडा कि वे विक्षिप्त हो गए । लगभग पांच मास वे विक्षिप्ति की अवस्था मे रहे । उनके जीवन की घटना हमारे लिए एक सदेश है कि हमे शिशुओ मे निडरता के सस्कार डालने चाहिए। किसी कार्य से विरत करने के लिए उन्हे भयभीत करने का सहारा लेना खतरनाक है, विवेकहीनता है ।

धारा नगर मे चातुर्मास : काव्य रचना की ओर झुकाव

मुनिश्री का सवत् १९४९ का चातुर्मास राजा भोज की प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगरी 'धार' मे हुआ। इस चातुर्मास की स्मरणीय वात है मुनिश्री का काव्य रचना की ओर झुकाव। शास्त्रो के अध्ययन, मनन के साथ ही युवा मुनि इन दिनो काव्य-रचना मे निमग्न रहते । इन दिनो आपने स्तुति-परक भक्ति-भावना से परिपूर्ण अनेक सुन्दर कविताओ की रचना की ।

चातुर्मास के पश्चात् विहार करके आप इन्दौर, उज्जैन, बडनगर, बदनावर होते हुए रतलाम पधारे। रतलाम मे उस समय पूज्य श्री हुक्मीचन्द्र जी महाराज के सम्प्रदाय के तीसरे पाट को विभूषित करने वाले आचार्य पूज्य श्री उदयसागर जी महाराज विद्यमान थे। मुनि जवाहरलाल जी की कवित्व-प्रतिभा, व्याख्यान शक्ति तथा बुद्धिमत्ता से प्रभावित होकर उन्होने आशा प्रकट की कि भविष्य मे वे एक प्रभावशाली सन्त होंगे। रतलाम से विहार करके आप जावरा होते हुए जावद पहुंचे। उस समय जावद मे श्री चौथमल जी महाराज (बड़े) विद्यमान थे। इन्ही श्री चौथमल जी महाराज ने बाद मे आचार्य पद सुशोभित किया था। मुनि जवाहरलाल जी ने अपनी ज्ञान-साधना और कवित्व-प्रतिभा से श्री चौथमल जी महाराज को बड़ा प्रभावित किया। मुनि रूप में जवाहर-लाल जी का भविष्य अति उज्ज्वल जान कर चौथमल जी महाराज ने मुनिश्री घासीराम जी को परामर्श देते हुए कहा—'यह बालक बड़ा प्रतिभाशाली और होनहार है। आपके पास इसे पढाने की सुविधा नही है। अगर आपको सुविधा हो तो इसे रामपुरा (होलकर स्टेट)

---

१. दूसरे पाट को विभूषित करने वाले आचार्य श्री शिवलाल जी म. थे।

ले जाइए। वहा शास्त्रो के अच्छे ज्ञाता श्रावक केसरीमल जी रहते। उनसे इसे शास्त्रों का अभ्यास कराइये।

रामपुरा-चातुर्मास : आगमों के अध्ययन का सुअवसर

श्री चौथमल जी महाराज के परामर्शानुसार श्री घासीराम जी महाराज ने अपने साधुवर्ग के साथ रामपुरा की ओर विहार किया तथा संवत् १९५० का चातुर्मास रामपुरा मे ही किया। मुनि जवाहरलाल जी ने शास्त्रज्ञ श्री केशरीमल जी से आगमों का अध्ययन किया।

जावरा में चातुर्मास : उदीयमान उपदेशक

सवत् १९५१ का चातुर्मास 'जावरा' कस्बे मे सम्पन्न हुआ। इस चातुर्मास काल मे युवामुनि श्री जवाहरलाल एक सफल प्रवचनकार के रूप में उभर कर जनसमाज के सामने आए। उनकी वाणी के स्वाभाविक ओज, माधुर्य तथा प्रवचन की नवीन शैली ने लोगों को प्रभावित किया। उनके प्रवचनो मे जन-समूह उमड पड़ता था।

थांदला-आगमन

इस चातुर्मास के पश्चात् मुनि श्री जवाहरलाल

अपनी जन्मभूमि थांदला आए। थांदला के निवासियो ने जिस बालक को मातृ-पितृहीन तथा वस्त्र-विक्रेता के रूप मे देखा, उसी को एक प्रभावशाली मुनिराज के रूप में देख कर वे अपने को गौरवान्वित अनुभव करने लगे।

संवत् १९५२ का चातुर्मास आपने थादला में किया।

खांचरौद में चातुर्मास : प्राकृतिक चिकित्सा से साक्षात्-परिचय :

मुनि श्री जवाहरलाल जी संवत् १९५५ में जब खांचरौद मे चातुर्मास कर रहे थे तो आपको 'संग्रहणी' रोग हो गया। उपचार किये गए परन्तु लाभ न हुआ। तभी एक चमत्कारिक घटना घटी।

साधु लोग अपने दैनिक कार्यक्रम में हुए व्याघात के प्रायश्चित्त स्वरूप अपने लिए कुछ उपवासों के दण्ड का विधान स्वीकार कर लेते हैं। उपवास से आत्म-शुद्धि होती है। मुनि जवाहरलाल जी पर भी इस तरह के प्रायश्चित्त स्वरूप कुछ उपवास चढ़ गए थे। जब संग्रहणी रोग का उपचार न हुआ तथा यह बढता ही गया तो आपने विचार किया कि कौन जाने यह रोग ही मेरे लिए प्राण-लेवा हो जाए। जीवन का विश्वास भी क्या? अतः मुझे उपवासों का ऋण उतार लेना

चाहिए। इस प्रकार उन्होंने लगातार छह उपवास करे डाले। इसका चमत्कारिक प्रभाव हुआ। वे न केवल ऋण-मुक्त हुए अपितु साथ ही रोग-मुक्त भी हो गए। इस घटना से उपवास का प्रत्यक्ष फल उनके सामने प्रकट हो गया। प्राकृतिक चिकित्सा से उनका साक्षात् परिचय हुआ। यह परिचय कालान्तर मे प्रगाढ होता गया। आगे चल कर उन्होंने अपने अनेक प्रवचनो मे उपवास का महत्त्व प्रतिष्ठापित किया।

साधु समाज के पथ-प्रदर्शक

पूज्य श्री हुक्मीचन्द्र जी महाराज के चौथे पाट को विभूषित करने वाले आचार्य के रूप मे श्री चौथमल जी महाराज ने माघ शुक्ला दशमी सवत् १६५४ को यह गुरुतर दायित्व ग्रहण किया। वयोवृद्ध होने के कारण अपने विशाल सम्प्रदाय का सचालन व निरीक्षण उनके लिए अत्यन्त कठिन कार्य था, अत उन्होंने भिन्न-भिन्न प्रान्तो मे विचरण करने वाले साधुओ की देखरेख व पथ-प्रदर्शन के लिए चार योग्य साधुओ को नियुक्त किया। इनमे मुनि श्री जवाहरलाल जी भी एक थे। युवा मुनि के लिए यह गौरव की बात थी। यह उनकी प्रतिभा तथा बुद्धिमत्ता का सम्यक् आदर था। इस समय उनकी आयु मात्र २४ वर्ष थी तथा दीक्षा हुए उन्हे आठ वर्ष ही हुए थे।

आचार्य श्री श्रीलाल जी महाराज

आचार्य श्री चौथमल जी महाराज ने सवत् १९५७ का चातुर्मास रतलाम मे किया । यहा उनकी शारीरिक अस्वस्थता बहुत बढ गई थी । कार्तिक शुक्ला अष्टमी की रात्रि को आपका देहावसान हो गया । इससे एक सप्ताह पूर्व ही उन्होने श्री श्रीलाल जी महाराज को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया था । रतलाम मे चातुर्मास पूर्णकर पूज्य श्री श्रीलाल जी महाराज इन्दौर पधारे, उस समय मुनि श्री जवाहरलाल जी भी महीदपुर मे अपना चातुर्मास पूर्ण कर आचार्य श्री के दर्शन करने इन्दौर पधारे ।

प्रत्युत्तर दीपिका

सवत् १९५९ मे मुनि श्री जवाहरलाल जी का चातुर्मास जोधपुर में था । उस समय वहा तेरापन्थी सम्प्रदाय के सप्तम आचार्य श्री डालचन्द जी का भी चातुर्मास था । इस सम्प्रदाय के प्रथम आचार्य श्री भिक्खूगणी प्रारम्भ मे स्थानकवासी साधु-समाज मे ही दीक्षित हुए थे लेकिन कालान्तर में दया-दान के अहिंसात्मक निषेध-परक अर्थ को ही आप धर्म के रूप मे मानने लगे । पच महाव्रतधारी साधुओ के अतिरिक्त अन्य

प्राणियों को साता पहुचाने मे आप एकान्त पाप की मान्यता का प्रचार करने लगे। आचार्य श्री रघुनाथ जी म. सा. श्री भिक्खूगणी जी की उक्त मान्यताओं से सहमत न हो सके। इस कारण श्री भिक्खूगणी जी ने पृथक् रूप से तेरापथ सप्रदाय का प्रचलन किया। जोधपुर मे चातुर्मास के अवसर पर जब दोनों सम्प्रदायो की विभूतिया उपस्थित थी तो शास्त्रार्थ की बात चल पडी। पर किन्ही कारणो से यह शास्त्रार्थ नही हो सका, परन्तु मुनि श्री जवाहरलाल जी द्वारा प्रस्तुत सात प्रश्नो के उत्तर रूप मे तेरापंथी समाज की ओर से जब प्रश्नोत्तर समीक्षा पुस्तिका प्रकाशित हुई तो उसके प्रत्युत्तर मे मुनिश्री ने तेरह दिन के अल्प काल मे 'प्रत्युत्तर-दीपिका' नामक रचना की, जिसको समाज ने आवश्यक समझकर प्रकाशित किया।

इन पुस्तिकाओ के आधार पर संवत् १९६० मे पौष माह मे जैतारण मे मुनि श्री जवाहरलाल जी व तेरापंथी सप्रदाय के मुनि श्री फौजमल जी मे शास्त्रार्थ हुआ, जिसमे श्री जवाहरलाल जी के विचारो को मान्य घोषित किया गया।

मुनिश्री की ख्याति दिनोंदिन बढने लगी। जो भी उनके दर्शन करने व प्रवचन सुनने आता, अत्यधिक

प्रभावित होता। अनेक जैनेतर लोग जिनमें राजपूत, जागीरदार, उच्च पदाधिकारीगण तथा सामान्य व्यक्ति-सभी प्रकार के लोग होते थे, उनके उपदेशामृत का पान कर अपने को धन्य मानते। उनकी व्याख्यान-शैली हृदयग्राही थी। उनका कहानी कहने का ढग अत्यधिक रोचक था। उनकी इसी प्रभावशाली प्रवचन कला का परिणाम था कि सवत् १९६२ मे उदयपुर चातुर्मास के अवसर पर कसाइयो के मुखिया ने उनकी उपदेश-सभा मे खड़े होकर प्रतिज्ञा की—"महाराज! मै जब तक जीऊ गा कसाईपन नही करू ंगा। कभी किसी जीव को नही मारू गा और न मास खाऊ ंगा, मारने के उद्देश्य से वकरा आदि पशुओ का व्यापार भी नही करू ंगा।"

इस मुखिया ने जीवन-पर्यन्त न केवल उक्त प्रतिज्ञा को निभाया, अपितु अन्य कसाइयो को भी अपना घृणित व्यवसाय छोडने को प्रेरित किया। यह मुनिश्री के उपदेशो का चमत्कार था।

इसी प्रकार स १९६४ मे रतलाम मे चातुर्मास के पश्चात् मुनिश्री विहार करके बाजणा पहुचे तो वहां के लगभग ७० गावो के भील-मुखियाओ ने उनके उपदेशों से प्रभावित होकर पर्वों तथा अन्य अवसरो पर भैंसो

तथा बकरों की बलि न करने की प्रतिज्ञा की।

रतलाम में श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन-कान्फ्रेन्स के द्वितीय अधिवेशन के अवसर पर भी आपके प्रवचनो की धूम रही। आप एक तेजस्वी व्याख्याता के रूप मे प्रतिष्ठित होते गए।

अन्ध विश्वासों पर कुठाराघात

सवत् १९६७ मे इन्दौर मे चातुर्मास के पश्चात् आपने महाराष्ट्र की ओर विहार किया। कई वर्षों तक आप महाराष्ट्र मे विहार करते रहे। सवत् १९६८ का चातुर्मास अहमदनगर मे, १९६९ का जुन्नेर मे तथा १९७० का घोटनदी मे हुआ।

घोडनदी मे चातुर्मास के अवसर पर मुनिश्री को बुखार आने लगा। बुखार जब लम्बा होता गया तो वहा की स्त्रियो को यह विश्वास हो गया कि मुनिश्री को नजर लग गई है। वहा गिरधारीलाल नाम का एक व्यक्ति था, जो लोगो की नजर उतारने आदि के अन्धविश्वास के सहारे ही अपनी जीविका चलाता था। उसके पास एक मोहरा था, जिसे वह पानी मे रख कर और उस पर अगूठा रख कर उसे उठाता था। अगर मोहरा उठ जाता तो वह कहता कि देखो मोहरा उठ रहा है। इससे तात्पर्य है कि सम्बन्धित

व्यक्ति को नजर लग गई है। प्राय: किसी भी प्रकार की बीमारी के लिए वह इस प्रकार नजर लगने की बात कहता। मुनिश्री के बुखार को भी उसने नजर लगने का कारण बताया।

मुनिश्री को नजर लगने जैसे अन्धविश्वास में बिलकुल विश्वास न था, परन्तु वे मोहरा उठने का मर्म समझकर भ्रम दूर करना चाहते थे। अत: सब लोगो के चले जाने के पश्चात् उन्होंने मुनिश्री गणेशी-लाल जी से मोहरा जैसा एक पत्थर मगवाया। उसे पानी मे रख कर अगूठे से दबाया। हाथ के साथ ही पत्थर भी ऊंचा उठ आया। मुनिश्री ने दूसरे दिन अनेक स्त्री-पुरुषो के सामने मोहरा उठा कर दिखाया और उनका भ्रम दूर किया। उन्होने अपने प्रवचनो मे मन्त्र-तन्त्र, नजर, जादू-टोना, भूत-प्रेत, देवी-देवता आदि से सम्बन्धित अन्धविश्वासो पर कुठाराघात किया और लोगो को सच्चे धर्म को समझने की ओर प्रेरित किया।

गणी पदवी

संवत् १९७१ मे मुनि श्री जवाहरलाल जी का चातुर्मास जाम गाव मे था। उसी समय श्री हुक्मीचंद जी महाराज के सम्प्रदाय के पांचवें पाट को विभूषित करने

थाने श्री श्रीलाल जी महाराज रतलाम में विराज रहे थे। चातुर्मास समाप्त होने से पाच दिन पूर्व आपके पैर मे अकस्मात तीव्र वेदना प्रारम्भ हो गई। इससे चातुर्मास के पश्चात् आपका विहार करना असभव हो गया। अपनी व्याधि को बढता हुआ देख कर आपने अपने सम्प्रदाय के १०० साधुओ की देखरेख व सार-संभाल के लिए अपने अतिरिक्त ४ गणी नियुक्त किए। उनमे मुनि श्री जवाहरलाल जी भी एक गणी नियुक्त किये गये।

पद-प्रलोभन से परे

संवत् १९७३ मे घोडनदी मे चातुर्मास पूर्ण कर मुनि श्री विहार करते हुए गणिया गाव पधारे। उन्ही दिनो आचार्य श्री श्रीलाल जी महाराज ने किसी अपराध के कारण जावरा वाले सन्तो को सम्प्रदाय से अलग कर दिया था। अलग होकर इन लोगो ने अपना एक अलग सगठन स्थापित करने का निश्चय किया। इसके लिए उन्हे एक ऐसे आचार्य की आवश्यकता थी जो अपने प्रभाव, प्रतिभा और वाक्-शक्ति के कारण नवीन सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा जमा सके। अत. उनकी दृष्टि मुनि श्री जवाहरलाल जी पर ही गई। मुनिश्री की सेवा मे पहुच कर उनसे आचार्य पद ग्रहण करने की प्रार्थना

की गई । परन्तु मुनिश्री तो ऐसे प्रलोभनों से कोसो दूर थे । वे सच्चे साधु थे, संयम को ही अपने जीवन मे सर्वस्व समझते थे । यही नहीं, वे तो समस्त स्थानकवासी परम्परा के सम्प्रदायो को एक सूत्र मे बाधने के पक्षधर थे, समस्त साधुओ को एक ही आचार्य के शासन मे देखना चाहते थे । अतः बार-बार प्रयत्न करने के बाद भी जावरा वाले सन्तगण मुनि श्री जवाहरलाल जी को इस प्रलोभन से आकर्षित नही कर सके ।

सेवा-परायणता

संवत् १९७५ मे हिवडा चातुर्मास के अवसर पर दक्षिण प्रान्त मे भयकर दुष्काल पडा, साथ ही इन्फ्लूएजा का भी बडा प्रकोप हो गया । मुनि श्री जवाहरलाल जी तथा श्री पन्नालाल जी महाराज को छोड कर नौ अन्य सन्तो को रोग ने धर दबाया । मुनियो की रुग्ण अवस्था मे आपने अपूर्व साहस एव उत्साहपूर्वक निग्लानि भाव से प्राकृतिक व मनोवैज्ञानिक पद्धति से सेवा की । फलस्वरूप सभी मुनि कुछ समय पश्चात् स्वस्थ हो गये और आपके सेवापरायण जीवन की मुक्तकंठ से प्रशसा करने लगे ।

कर्तव्य-बोध

दुष्काल के कारण आये दिन हृदय-विदारक करुण-कहानिया सुनने को मिलने लगी। रोग के कारण परिवार के परिवार नष्ट होने लगे। ऐसे समय मे अनुकम्पा से ओतप्रोत मुनि श्री जी का हृदय दयार्द्र हो उठता था तथा वे अपनी संयमी भाषा मे दुःखी-संक्लिष्ट प्राणियो के दुःख निवारण हेतु कर्तव्य-बोध कराया करते थे। श्रावक-श्राविका वर्ग ने अपने कर्तव्य को समझा और अपने कर्त्तव्यो की क्रियान्विति स्वरूप समाज ने २००-२५० व्यक्तियो की जीवन-निर्वाह सम्बन्धी समुचित व्यवस्था की।

युवाचार्य

इन्ही दिनो आचार्य श्री श्रीलाल जी महाराज का उदयपुर मे चातुर्मास था। उन पर भी इन्फ्लूएन्जा का प्रकोप हो गया तथा तीव्र ज्वर रहने लगा। इस समय उन्हे विचार हुआ कि जीवन का कोई भरोसा नही, अतः मुझे अपने उत्तराधिकारी का निर्णय कर लेना चाहिए। उन्होने अपने सम्प्रदाय के मुनिराजो पर दृष्टिपात किया और एकाएक ही उनकी दृष्टि श्री जवाहरलाल जी महाराज पर टिक गई। इस प्रतिभा-

शाली वक्ता, दृढ संयमी सर्वथा सुयोग्य संत को अपना उत्तराधिकारी घोषित करने का उन्होने निश्चय कर लिया ।

स्वास्थ्य ठीक होते ही उन्होंने विभिन्न स्थानों से दर्शनार्थ एकत्रित अनेक श्रावको के समक्ष अपने विचार रखे । सभी लोगों ने आचार्य श्री के चुनाव का हार्दिक समर्थन किया तथा प्रसन्नता व्यक्त की । तदनुसार कार्तिक शुक्ला द्वितीया संवत् १९७५ के दिन श्री जवाहरलाल जी महाराज को युवाचार्य घोषित किया गया । सूचना भेजी गई । उत्तर न मिलने पर उदयपुर सघ की ओर से कतिपय प्रतिष्ठित श्रावक उनकी सेवा में स्वीकृति हेतु गए । लोगो के आग्रह तथा आचार्यश्री के आदेश को ध्यान में रख कर मुनि श्री जवाहरलाल जी ने महाराष्ट्र से मध्यप्रदेश की ओर विहार किया । फाल्गुन शुक्ला १० को मुनि श्री मोतीलाल जी तथा अन्य मुनियों के साथ आपके रत-लाम पधारने पर हजारो दर्शनार्थी नर-नारियो ने आपकी अगवानी की तथा हर्षोल्लास प्रकट किया । आचार्य श्री श्रीलाल जी महाराज पांच दिन पूर्व ही रतलाम पधार चुके थे । अत. मुनिश्री ने रतलाम पहुंचते ही सर्वप्रथम आचार्यश्री के दर्शन किए । चैत्र कृष्णा नवमी बुधवार संवत् १९७५ तारीख २६ मार्च,

१६१६ को मुनि श्री जवाहरलाल जी युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। इस अवसर पर आयोजित उत्सव में विविध स्थानो से अनेक श्रावक-श्राविकाएं एकत्रित हुए।

इस उत्सव के पश्चात् आचार्यश्री की आज्ञा से युवाचार्य श्री जवाहरलाल जी ने उदयपुर की ओर विहार किया तथा संवत् १६७६ का चातुर्मास वहां किया। चातुर्मास के पश्चात् आप चित्तोड, भीलवाड़ा होते हुए ब्यावर पधारे। आचार्य श्री श्रीलाल जी महाराज भी जावरा मे चातुर्मास सम्पन्न कर विहार करते हुए ब्यावर मे पहले से ही विराज रहे थे।

इन्ही दिनो आगरा तथा जयपुर के कतिपय प्रमुख श्रावको का एक प्रतिनिधि मडल आचार्यश्री के दर्शन करने ब्यावर आया तथा उनसे निवेदन किया कि मुनि श्री मुन्नालाल जी महाराज तथा उनके साथी मुनि दिल्ली से विहार कर पधार रहे हैं तथा आपसे साम्प्रदायिक एकता के सम्बन्ध मे वार्तालाप को उत्सुक हैं। अत इस अनुरोध को ध्यान मे रख कर आचार्य श्री श्रीलाल जी महाराज तथा युवाचार्य श्री जवाहरलाल जी महाराज अजमेर पहुंचे। साम्प्रदायिक एकता सम्बन्धी विषयो पर वार्तालाप हुआ। अजमेर से विहार

करके आचार्यश्री पुनः ब्यावर पधार गए और युवाचार्य श्री ने आचार्यश्री के आदेश से बीकानेर की ओर विहार किया ।

आचार्य श्री श्रीलाल जी महाराज का स्वर्गवास

ब्यावर से आचार्यश्री जैतारण पधार गए थे । आषाढ़ मास की अमावस्था के दिन प्रवचन देते समय एकाएक आपके नेत्रो की ज्योति बन्द हो गई । सिर चकराने लगा । उन्हे अपनी मृत्यु का पूर्वाभास होने लगा । आषाढ शुक्ला द्वितीया को व्याधि अधिक बढ गई । उसी रात्रि को मुनि श्री हरकचन्द जी महाराज ने पूज्यश्री को संथारा करा दिया । रात्रि के पिछले प्रहर में ब्रह्म मुहूर्त में पूज्य श्री श्रीलाल जी महाराज कालधर्म को प्राप्त हुए । सारा समाज शोक-विह्वल हो गया । पूज्यश्री श्रीलाल जी महाराज ने लगभग ३२ वर्ष तक प्रव्रज्या का पालन किया, जिसमे २० वर्ष तक आचार्य पद सुशोभित किया ।

आचार्यत्व का उत्तरदायित्व

आचार्यश्री के स्वर्गवास का समाचार मुनि श्री जवाहरलाल जी को भीनासर मे प्राप्त हुआ । इस आकस्मिक अवसान ने आपको शोक-निमग्न कर दिया ।

परंपरानुसार आपको उसी समय आचार्य घोषित कर दिया गया। समाज की सारी व्यवस्था का भार आप पर आ पडा। उस समय आप तीन दिवसीय उपवास (तेला) व्रत मे थे। इस दु खद वेला मे मन की शाति के लिए आपने उपवास की अवधि लम्बी कर ली। लोगो के बहुत अनुनय-विनय तथा आग्रह के कारण आपने आठ दिन पश्चात् उपवास समाप्त किया।

३. आचार्य-जीवन

धार्मिक ग्राचार्यत्व एक महान् उत्तरदायित्व है। धर्माचार्य का समाज पर समग्र प्रभाव पडता है। धर्म और समाज अन्योन्याश्रित है, अत समाज में धर्माचार्य की भूमिका अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होती है। धर्माचार्य का आचरण, उसका व्यक्तिगत जीवन, उसका कर्तृत्व उसके विचार सभी पर समग्र समाज की दृष्टि रहती है। धर्माचार्य का आश्रयी साधुवर्ग अपने आचार्य का अनुकरण करता है और उन सबके व्यवहारो से गृहस्थ का आचरण प्रभावित होता है। अतः कहना नही होगा कि धर्माचार्य के रूप मे समर्थ विद्वान, चरित्रवान, दृढ-संयमी, लोक-कल्याणकामी, प्रभावक-व्यक्तित्व और दूरदर्शी विचारक यदि किसी देश अथवा समाज को प्राप्त हो गया है तो वह समग्र देश अथवा समाज के उन्नयन के लिए परम सौभाग्य का अवसर है।

तदनुकूल मुनि श्री जवाहरलाल जी के रूप मे एक सर्वगुण सम्पन्न व महान् प्रभावक व्यक्तित्व वाले आचार्य को प्राप्त करना तत्कालीन श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन समाज के लिए ही नही, बल्कि सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए महान् सौभाग्य था।

आचार्य रूप में प्रथम चातुर्मास

जैसा लिखा जा चुका है कि आचार्य श्री श्रीलाल जी महाराज के देहावसान के समय श्री जवाहरलाल जी भीनासर मे थे, यही उनको आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया गया था। श्री श्रीलाल जी महाराज के स्वर्गवास से शोकाकुल स्थिति मे ही वे भीनासर से बीकानेर पधारे। पूर्व निश्चयानुसार सवत् १९७७ का चातुर्मास भी आपने बीकानेर मे ही किया। आचार्य के रूप मे आपका यह प्रथम चातुर्मास था।

समाजोत्थान की चिन्ता

आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा बडे सूक्ष्म द्रष्टा थे। वे युग-प्रधान व्यक्तित्व के धनी थे। उन्हे समाज मे व्याप्त बुराइयो के प्रति हार्दिक क्षोभ था। वे चाहते थे कि समाज आध्यात्मिक सैद्धान्तिक ज्ञान के ठोस धरातल पर विकास करे, क्योकि सैद्धान्तिक

ज्ञान के अभाव में किया गया विकास समाजोत्कर्ष के लिए हितावह नही हो सकता । अत. तत्त्वज्ञान के प्रचार-प्रसार हेतु साधु-मर्यादा मे आपके उपदेश सम्यग्ज्ञान पूर्वक हुआ करते थे । आपके उद्बोधनो से समाज को ज्ञान-दर्शन-चारित्र की अभिवृद्धि मे रचनात्मक कार्यक्रम अपनाने की प्रेरणा प्राप्त होती थी । बीकानेर चातुर्मास मे इसी प्रकार की एक योजना का सूत्रपात हुआ ।

बीकानेर, गगाशहर, भीनासर के समाज के गण्य-मान्य व्यक्तियो तथा बाहर से आमत्रित समाज के प्रतिष्ठित व्यक्तियो की एक सभा सेठ दुर्लभजी त्रिभुवन झवेरी की अध्यक्षता मे हुई । इस सभा मे प्रस्ताव स्वीकृत कर 'श्री श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन गुरुकुल' स्थापित करने का निश्चय किया गया । बीकानेर, गगाशहर, भीनासर समाज की तरफ से इसके लिए विपुल धनराशि के आश्वासन प्राप्त हुए । पर वह योजना तत्काल मूर्तरूप नही ले सकी । सात वर्ष पश्चात् 'श्री श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन हितकारिणी सस्था' की बीकानेर मे स्थापना की गई, जिसके माध्यम से धार्मिक-जागरण, शैक्षणिक विकास और सामाजिक उन्नति व हित के अनेक कार्यक्रम प्रारम्भ किए गए । संस्था के प्रथम सभापति समाजरत्न श्री भैरूदान जी सेठिया तथा मत्री श्री जेठमल जी सेठिया निर्वाचित हुए ।

खद्दरधारी आचार्य

वीकानेर चातुर्मास के पश्चात् आचार्य श्री जवाहरलाल जी महाराज ने उदयपुर की ओर विहार किया। वहां उन्होने अपने सघ के साधुओ को एकत्र होने की सूचना दी तथा सवकी सहमति से व्यवस्था सम्वन्धी कुछ नियम वनाए।

इन्ही दिनो उन्हे यह जानकारी मिली कि मिल मे वनने वाले वस्त्रो मे, उन्हे चमकीला तथा मुलायम वनाने के लिए चर्वी का उपयोग होता है। इस प्रकार चर्वी वाले वस्त्रो को घोर हिंसा का मूल समझ कर उन्होने ऐसे वस्त्रो के त्याग का सकल्प कर लिया और हाथ के वने खद्दर के वस्त्र ही धारण करने का निश्चय किया। इसके पश्चात् आजीवन उन्होने खादी के वस्त्र ही धारण किए तथा महारम्भ एव परावलम्वन पूर्वक जीवन व्यतीत करने की पद्धति के विरुद्ध अल्पारम्भ एव स्वावलम्वन के स्वरूप की सुन्दर, विशद एव व्यापक व्याख्यायें प्रस्तुत की जो सैद्धान्तिक और व्यवहार–सगत थी, जिनके कुछ उद्धरण निम्न हैं —

तुम जिस देश मे जन्मे हो, वहा के अन्न जल और वायु से तुम्हारे शरीर का पालन–पोषण हुआ है, उसी देश मे उत्पन्न होने वाली वस्तुओ के अतिरिक्त

दूसरी वस्तुओं का तुम्हें त्याग करना चाहिए। स्वदेश की वस्तुओ से तुम्हारा जीवन-निर्वाह सरलता से हो सकता है।

इस प्रकार के विचारो से लोग खादी पहनने के लिए अधिकाधिक प्रेरित हुए। यही नही, अपने प्रवचनो में इस सम्बन्ध मे प्रस्तुत तर्को द्वारा उन्होंने तत्कालीन रतलाम नरेश जैसे प्रभावशाली खादी-विरोधियों के खादी-विरोध को दूर किया। चर्बी की पालिश लगे मिल के वस्त्र पहनने वालो के लिए उनका एक तर्क यहा उद्धत है—

"दूध के घड़े मे यदि गाय के खून की एक बून्द पड़ जाय तो उसे काम मे नही लाया जाता। उसे अपवित्र समझकर लोग छोड़ देते है। किन्तु आश्चर्य की बात है कि गाय की चर्बी लगे वस्त्रो को पहनने मे लोगो को संकोच नही होता। मित्रो! इन वस्त्रो के लिए कितनी गायो और भैंसों के प्राण ले लिए जाते है, क्या आप इसे जानते है? ये वस्त्र महाआरम्भ के द्वारा वने हुए हैं, इसलिए पाप के कारण है। आप सभी को ऐसे वस्त्रों का त्याग कर देना चाहिए।

हितेच्छु श्रावक मण्डल की स्थापना

आचार्य श्री जवाहरलाल जी के उद्बोधनो से प्रभावित होकर रतलाम संघ ने संवत् १९७८ मे सामाजिक अस्त-व्यस्त एव अव्यवस्थित वातावरण को सुव्यवस्थित एव सुसगठित बनाने हेतु 'हितेच्छु श्रावक मडल' रतलाम की स्थापना की ।

महाराष्ट्र की ओर

सवत् १९७८ मे रतलाम चातुर्मास के पश्चात् आपने महाराष्ट्र की ओर विहार किया । इस विहार का कारण था मुनि श्री लालचन्द जी महाराज का आग्रह भरा निवेदन । वे उस समय महाराष्ट्र के चारोली नामक स्थान पर रुग्णावस्था मे थे और उनकी अन्तिम इच्छा आचार्य श्री जवाहरलाल जी के दर्शन-लाभ की थी । भक्त की इच्छा को ध्यान मे रख कर आचार्यश्री ने उग्र विहार किया । परन्तु विधि का कुछ ऐसा विधान बना कि श्री लालचन्द जी महाराज बिना दर्शन-लाभ किए ही चल बसे । मार्ग मे आचार्य श्री के साथ मे विहार कर रहे मुनि श्री हरणुतमल जी रोगग्रस्त होकर स्वर्गवासी हो गये । मार्ग मे अनेक बाधाए भी उठानी पड़ी । यहा तक कि वालसमद

नामक स्थान पर तो उन्हें ठहरने तक को स्थान न मिल सका । आहार मिलने की स्थिति तो और भी बदतर रही । मुनि श्री लालचन्द जी महाराज के स्वर्गवास का समाचार जान कर आपने चारोली जाना स्थगित कर दिया । यहां से अहमदनगर संघ के अत्यधिक आग्रह के कारण आपने अहमदनगर की ओर विहार किया । अहमदनगर जिले मे उन दिनो दुर्भिक्ष था । आचार्य श्री लोगों के समक्ष अपनी उपदेश-सभाओं मे प्रायः दुर्भिक्ष का मार्मिक शब्दों मे वर्णन करते और इस प्रकार सामर्थ्यवान व्यक्तियों को प्राणी-रक्षा की प्रेरणा करते । आचार्य श्री के प्रवचनो से प्रभावित होकर स्थानीय समाज द्वारा दुर्भिक्ष राहत-कार्यों की योजना वनाई गई और कार्यारम्भ हुआ ।

सार्वजनिक जीवदया मण्डल, घाटकोपर (वम्वई)

आचार्य श्री के सवत् १९८० के चातुर्मास में प्रभावक प्रवचनो के फलस्वरूप जीवदया मडल की स्थापना हुई । चातुर्मास के पहले जव आप घाटकोपर से दादर के लिए विहार कर रहे थे तो मार्ग मे मास से भरे टोकरे ले जाते हुए आपकी अनेक लोगो पर निगाह पडी । पूछने पर ज्ञात हुआ कि वम्वई मे कुरला और वांदरा के कसाईखाने मे प्रति वर्ष लगभग एक

लाख चवालीस हजार गाएं और भैसें कटती हैं। दूध का व्यापार करने वाले घोसी गाय-भैसो को तव तक तो अपने पास रखते हैं, जव तक कि वे पर्याप्त दूध देती हैं, जहा दूध कम हुआ नही कि उनका रखना मंहगा पड जाता है, अतः वे उन्हे कसाइयो को वेच देते हैं । इस वात को सुन कर आचार्य श्री अत्यन्त दु खी हुए । उनका दिल भर गया । लाख आग्रह के उपरान्त भी उन्होने बम्वई मे प्रवेश करने से ही इनकार कर दिया और दादर से पुन. घाटकोपर लौट आए। इस पशुवध से दु.खी आचार्य श्री ने घाटकोपर चातुर्मास मे अहिसा धर्म का मार्मिक विवेचन प्रस्तुत करते हुए पशु-हिसा निवारण की लोगो को प्रेरणा दी । इसी प्रेरणा का सुफल सार्वजनिक जीव दया मण्डल की स्थापना है । इस सस्था की पशुशाला मे लगभग ६००-७०० पशुओ का पालन हो रहा है। अनेक गाय-भैसो को इस सस्था ने कसाइयो के हाथो से बचाया है । दूध देना वन्द कर देने के पश्चात् पशुओ के पालन के लिए सस्था की कई शाखाए पनवेल, जलगाव, इगतपुरी, गोटी आदि स्थानो मे खुल गई हैं ।

अछूतोद्धार

घाटकोपर (वम्वई) मे चातुर्मास समाप्त कर जव आचार्य श्री विहार करते हुए नासिक आये तो

अछूतों के साथ सवर्णों के दुर्व्यवहार से दुःखी मन हो आपने अछूतोद्धार पर मर्मस्पर्शी प्रवचन किया। अछूतोद्धार आपके प्रवचनो का प्रिय विषय ही बन गया। अछूतोद्धार पर आपके सैकड़ो प्रवचन हैं। आपके प्रवचनों से प्रेरित होकर नासिक मे सवर्ण जनता ने आश्वासन दिया कि वे अस्पृश्यो के साथ अच्छा व्यवहार करेगे ।

सूदखोरी पर प्रहार

महाराष्ट्र के नान्दुर्डी नामक स्थान पर आचार्य श्री ने पाया कि वहा के अधिकांश जैन सूद पर ऋण देने का धन्धा करते थे। वे अधिक ब्याज वसूल करते थे, अतः वहा की गरीब जनता मे उनके प्रति बडा असन्तोप था। आपके अहिसा धर्म पर एक प्रवचन को सुन कर जैनेतर लोगों ने कहा, "महाराज! हम लोग भैसा मारते हैं, परन्तु ये साहूकार लोग अनुचित सूद ले लेकर हम मनुष्यो को मारते है । अगर ये लोग अपनी करतूते छोडने को तैयार है तो हम भी दशहरा आदि के अवसरो पर भैसा मारने का त्याग करने को तैयार हैं।"

पूज्य आचार्य श्री ने जैनो को समझाया और

से लोगों को चमत्कृत कर दिया ।

उत्तराधिकारी का चयन

अपने रोग की निरन्तर बढ़ती अवस्था मे उन्हे जीवन की नश्वरता का अहसास अधिकाधिक सोचने विचारने को बाध्य करने लगा । इस मनःस्थिति मे उन्होने अपने उत्तराधिकारी का निर्णय करना उचित समझा । वहां उपस्थित समाज के प्रतिष्ठित लोगों से परामर्श किया गया । तदनुसार उन्होंने मुनि श्री गणेशीलाल जी महाराज को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया ।

जलगांव में जैन छात्रावास की स्थापना

इस चातुर्मास काल मे आचार्य श्री के प्रबोधन के फलस्वरूप जलगाव मे एक जैन छात्रावास की भी स्थापना की गई । यह छात्रावास अभी तक कार्यरत है ।

अस्वस्थता के कारण आचार्य श्री लम्बा विहार करने मे असमर्थ थे, अतः सवत् १९८२ का चातुर्मास भी जलगाव मे सम्पन्न हुआ । इसके पश्चात् आपने मध्य-प्रदेश होते हुए राजस्थान ओर विहार किया । संवत् १९८३ का चातुर्मास ब्यावर मे हुआ । इस सारे समय मे आचार्य श्री ने अपने व्याख्यानो द्वारा लोगो में

सामाजिक व धार्मिक चेतना जागृत की । सामाजिक सुधार के अनेक कार्य हुए । ब्यावर चातुर्मास के पश्चात् बीकानेर की ओर विहार करते समय जयपुर मे आपका २४ फरवरी १९३७ को तीन घण्टे तक का एक अत्यन्त ओजस्वी चिरस्मरणीय प्रवचन हुआ, जिसमे आपने बीडी सिगरेट, भग आदि मादक द्रव्य, वेश्यागमन, परस्त्री सेवन, कन्या-विक्रय, वृद्ध-विवाह, अछूतोद्धार, गौरक्षा, सगठन आदि पर वहुत ही ओजस्वी व प्रभावशाली प्रवचन किया। प्रवचन मे अनेक प्रतिष्ठित अजैन भी उपस्थित थे, जिन्होने प्रवचन से गद्‌गद् होकर आचार्यश्री का चरण-वन्दन करके उनके प्रति अपना भक्तिभाव प्रकट किया । आचार्य श्री के प्रवचनो की एक विशेषता थी, साम्प्रदायिक सकीर्णता से मुक्ति और उनकी सार्वजनीनता । उनकी प्रवचन शैली के इस गुण ने उन्हे देश की वहुसख्यक जनता का प्रिय पात्र वना दिया था। उनके अस्पृश्यता निवारण, वाल-वृद्ध विवाह तथा मृत्यु-भोज जैसी कुरीतियो के उन्मूलन, चर्बी वाले मिल के वने वस्त्रो तथा अन्य महारम्भी वस्तुओ के निषेध आदि से सम्वन्धित अनेक प्रवचनो को पढ़ कर मानव-कल्याण और समाजोत्थान की उनकी उत्कट अभिलाषा को सहज ही अनुमानित किया जा सकता है। उनकी इच्छानुसार उनके प्रवचनो

में अछूतों को भी सवर्णों के साथ ही मिल कर बैठाया जाता था। वे मनुष्य-मनुष्य के इस भेदभाव के अत्यत विरोधी थे।

संवत् १९८४ के चातुर्मास (भीनासर-बीकानेर) के पश्चात् आचार्य श्री कई वर्षों तक राजस्थान, दिल्ली तथा हरियाणा की जनता को धर्म-प्रबोधन देते रहे। आपने इन्ही वर्षो में 'सत्-धर्म मण्डन' नामक एक ग्रन्थ की भी रचना की, जो सरदारशहर चातुर्मास (सं० १९८५), चुरू चातुर्मास (स० १९८६) तथा बीकानेर चातुर्मास (स० १९८७) मे मुख्यतः लिखा गया। आचार्य श्री ने अपने अथक प्रयत्नो से इस क्षेत्र में दया-दान की ज्योति प्रज्वलित की तथा समाज सुधार, अछूतोद्धार व खादी के वस्त्र पहनने के अपने प्रिय विषयो पर अनेक प्रवचन करते हुए लोगो की इस ओर रुचि जागृत की।

धर्म और समाज-सेवक ब्रह्मचारी-वर्ग : एक योजना

संवत् १९८८ में देहली चातुर्मास की अवधि में आचार्य श्री ने 'ब्रह्मचारी संघ' बनाने की एक योजना प्रस्तुत की। इस योजना का उद्देश्य था—गृहस्थ और साधु-वर्ग के बीच में एक ऐसे वर्ग की स्थापना, जिसमें

वे व्यक्ति समाविष्ट किये जाए जो ब्रह्मचर्य का अनिवार्य रूप से पालन करें और अकिंचन हो अर्थात् अपने लिए धन संग्रह न करें। ये लोग समाज की साक्षी मे धर्माचार्य के समक्ष इन दोनो व्रतो को ग्रहण करें। ये लोग समाज-सुधार और धर्म-प्रचार दोनो ही दृष्टियो से महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकते हैं। त्यागी होने के कारण समाज पर इनका प्रभाव स्वाभाविक ही होगा। आचार्य श्री ने इस वर्ग की स्थापना के अपने विचार के पक्ष मे निम्न तर्क प्रस्तुत किए, जो विचारणीय है और आज के सन्दर्भ मे और भी अधिक ध्यान देने योग्य हैं—

(१) जिन लोगो के हृदय मे वैराग्य की प्रवृत्ति है, परन्तु वे साधुत्व का भलीभाति पालन करने मे असमर्थ हैं, विवशतावश साधु-जीवन अगीकार करके वे साधुत्व का पूर्णरूपेण प्रतिपालन नही कर पाते, ऐसे लोग इस वर्ग मे सम्मिलित होकर साधु-वर्ग को दूषित होने से बचा सकते हैं। साथ ही अपनी वैराग्य-वृत्ति की मर्यादा का पालन कर सकते हैं।

(२) यह वर्ग न साधु-पद की मर्यादा में बन्धा होगा और न ही ग्रहस्थ के झझटो मे फंसा होगा।

अतः इस वर्ग द्वारा सामाजिक व धार्मिक सुधारों के कार्य में श्रावक–वर्ग को नेतृत्व प्राप्त हो सकेगा। बहुत से ऐसे कार्य जिन्हे साधु अपनी मर्यादावश सम्पन्न नही कर सकता तथा गृहस्थ करने में असमर्थ रहता है, इस वर्ग द्वारा सम्पन्न होने से उनकी मर्यादा मे कोई बाधा न होगी ।

(३) देश–विदेश मे धर्म–प्रचार, धर्म–सम्मेलनो मे अपने धर्म का प्रतिनिधित्व, सम्यक् शिक्षा, सत्-साहित्य प्रकाशन आदि ऐसे कार्य हैं, जो इस वर्ग द्वारा आसानी से सम्पन्न किए जा सकते है।

पदवी-प्रदान और अस्वीकृति

दिल्ली की जनता ने आचार्य श्री के प्रति अपनी प्रशंसात्मक भावनाएं प्रकट करने के लिए एक अभिनदन समारोह कर उन्हें जैन–साहित्य चिन्तामणि तथा जैन न्याय दिवाकर आदि पदविया प्रदान की परन्तु उन्होने विनम्रता पूर्वक यह अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार उन्होने साधुवर्ग के समक्ष एक अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया। साधु तो अनगार है, अकिंचन है, उसके लिए पदवी की लालसा ही क्यो हो ? साधु को पदवी प्रदान करने की परम्परा आगे चल कर गलत रूप

धारण कर सकती है, इस बात को दूरदर्शी आचार्य अच्छी तरह जानते थे ।

राष्ट्र-धर्म का निर्वाह और गिरफ्तारी की आशंका

उन दिनो राष्ट्रीय आन्दोलन अपने पूरे जोर पर था । सभी राष्ट्रीय नेता अग्रेज सरकार द्वारा जेलो मे डाल दिये गए थे । आचार्य श्री यद्यपि धार्मिक नेता थे परन्तु अपने सामयिक उत्तरदायित्व को भी वे भलीभाति समझते थे । यही कारण था कि उनके धार्मिक प्रवचन भी राष्ट्रीयता के रग मे रगे होते थे। वे स्वय खद्दरधारी थे, उनकी प्रवचन-शैली मनोहारी व ओजस्वी थी, सकीर्ण धार्मिकता से उठ कर ही वे अपनी बात कहते थे, इन सबका परिणाम यह हुआ कि उनके श्रोताओ मे जैन-अजैन का भेद नही रहा । जनता का प्रत्येक वर्ग उनके प्रवचनो को सुनने को टूट पडता । सरकार को यह भ्रम हो गया कि यह व्यक्ति धर्माचार्य के रूप मे कोई नया ही राष्ट्रीय-नेता है । उनके पीछे सरकारी गुप्तचर फिरने लगे । इस अवस्था मे उनकी गिरफ्तारी की आशका बढ चली । लोगो ने उनसे निवेदन किया कि वे अपने प्रवचन, धर्म की वातो तक ही सीमित रखें । राष्ट्रीय प्रश्नों को उनमे न आने दें । इससे सरकार का सदेह बढ़

रहा है, अतः ऐसा न हो कि वह आपको गिरफ्तार करले और इससे समस्त समाज को नीचा देखना पडे।

यह सुन कर आचार्य श्री ने सिंहनाद किया—"मै अपना कर्तव्य भलीभांति समझता हूँ। मुझे अपने उत्तरदायित्व का भी पूरा भान है। मैं जानता हूँ कि धर्म क्या है? मैं साधु हूँ। अधर्म के मार्ग पर नही जा सकता। किन्तु परतन्त्रता पाप है। परतत्र-व्यक्ति ठीक तरह धर्म की आराधना नही कर सकता। मैं अपने व्याख्यान मे प्रत्येक बात सोच-समझकर तथा मर्यादा के भीतर रह कर कहता हूँ। इस पर भी यदि राजसत्ता हमे गिरफ्तार करती है तो हमे डरने की क्या आवश्यकता है? कर्तव्य पालन मे डर कैसा? साधु को सभी उपसर्ग व परीषह सहने चाहिए, अपने कर्त्तव्य से विचलित नही होना चाहिए। सभी परिस्थितियों में धर्म की रक्षा का मार्ग मुझे मालूम है। यदि कर्त्तव्य का पालन करते हुए जैन-समाज का आचार्य गिरफ्तार हो जाता है तो इसमे जैन-समाज के लिए किसी प्रकार के अपमान की बात नही है। इससे तो अत्याचारी का अत्याचार सभी के सामने प्रकट हो जाता है।

आचार्य श्री के ये दृढ विचार सुन कर लोगों

को चुप हो जाना पडा । उनके प्रवचनो की धारा निर्बाध रूप से उसी प्रकार प्रवाहित होती रही ।

तत्पश्चात् आपने राजस्थान की ओर विहार किया । सवत् १९८९ का आपका चातुर्मास जोधपुर मे रहा । यही कार्तिक शुक्ला ११ को साधु-सम्मेलन आयोजित किये जाने के सन्दर्भ मे विचार-विनिमय हेतु एक शिष्ट-मण्डल आचार्य श्री की सेवा मे उपस्थित हुआ । साधु-सम्मेलन का अजमेर मे होना निश्चय किया गया । तदनुकूल लम्बी अवधि से की जा रही समस्त तैयारी के बाद तारीख ५ अप्रेल सन् १९३३ तदनुसार चैत्र कृष्णा दशमी को अजमेर मे साधु-सम्मेलन प्रारभ हुआ ।

अजमेर साधु-सम्मेलन : वर्द्धमान संघ की योजना[1]

इस सम्मेलन मे २६ सम्प्रदायो के लगभग २४० सन्तगण एकत्रित हुए । पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज भी अपने सन्तो के साथ इस सम्मेलन मे भाग लेने अजमेर पधारे । सम्मेलन मे भाग लेने वाले

---

१. इस योजना की विस्तृत जानकारी के लिए देखिए पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज सा. की जीवनी (पृष्ठ २०६ से २१२) ।

मुख्य-मुख्य मुनिराजों से आचार्य का जो वार्तालाप हुआ, उससे उन्हे सम्मेलन मे सघ-श्रेयस की दृष्टि से कुछ ठोस परिणाम निकलने की आशा न रही।

इस सम्मेलन मे आचार्य श्री ने वर्द्धमान सघ की अपनी महत्त्वपूर्ण योजना प्रस्तुत की। योजना का मुख्य विचार-विन्दु यह था कि साम्प्रदायिक भेदभाव मिटा कर समस्त साधुओं का एक सघ 'वर्द्धमान सघ' गठित किया जाए। सघ का एक ही आचार्य हो और उनकी अधीनता मे अनेक उपाचार्य उपाध्याय, प्रवर्तक, गणावच्छेदक आदि नियुक्त किए जाय। सभी साधु-साध्विया एक ही आचार्य के अनुशासन मे रहे तथा समस्त श्रावक-श्राविकाए भी वर्द्धमान सघ के मुख्याचार्य को ही अपना धर्माचार्य माने। सम्मेलन मे उपस्थित मुनिराजों ने इस योजना का हार्दिक स्वागत तो किया परन्तु अमल में लाने मे अपनी असमर्थता प्रकट की। फलतः योजना, योजना-मात्र बन कर रह गई।

साधु-सम्मेलन की कार्यवाही पूर्ण होने के पश्चात् आचार्य श्री ने अजमेर से विहार किया तथा राजस्थान के अनेक गावो को अपने उपदेशामृत से पवित्र करते हुए संवत् १९९० का चातुर्मास-काल उदयपुर मे व्यतीत किया।

उदयपुर हरिजनोद्धार

उदयपुर चातुर्मास के अवसर पर आचार्य श्री के उपदेश से प्रभावित होकर लगभग दो हजार हरिजन भाइयो (चमारो) ने मास, मदिरा तथा परस्त्रीगमन का त्याग किया । आचार्य श्री की व्याख्यान सभाओ मे हरिजन–वर्ग बेरोक-टोक उपस्थित होकर ज्ञान-लाभ करता था । उन्होने अपने उपदेशो मे उच्चकुलाभिमानी व्यक्तियो को प्राय· लताड बताई है तथा हरिजनो के प्रति उनको अच्छा व्यवहार करने के लिए प्रेरित किया है । उनके एक प्रवचन का तत्सम्बन्धी अश उद्धृत है।—

"मेहतरानी गटर साफ करती है और नगर की जनता को रोगो से बचाती है । वह नगर की जनता के प्राणो की रक्षिका है । उसकी सेवा अत्यन्त उपयोगी और अनुपम है । फिर भी चवरवाली को बड़ी समझना और मुकाबिले मे महतरानी को नीच मानना भूल है, अज्ञान है और कृतज्ञता के विरुद्ध है।"

उदयपुर चातुर्मास के पश्चात् आचार्य श्री देलवाडा, नाथद्वारा, निम्बाहेडा, बडी सादडी, कानोड आदि स्थानो पर अपने प्रवचनो से जन–जागृति व धर्म

प्रभावना बढाते हुए फाल्गुण कृष्णा द्वादशी सं० १९९० को जावद पधारे।

जावद में युवाचार्य पद-महोत्सव

अजमेर सम्मेलन के अवसर पर पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी महाराज के दोनों संप्रदायो द्वारा घोषित उत्तराधिकारी मुनि श्री गणेशीलाल जी को फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा से पहले युवाचार्य पदवी प्रदान करने का निश्चय कर लिया गया था। इस महोत्सव के लिए जावद के संघ का अत्यधिक आग्रह था। अतः जावद में ही यह महोत्सव करने का निश्चय किया गया। सभी स्थानों पर तत्सम्बन्धी आमन्त्रण भेजे गए तथा सन्तों व सतियो को सूचना दे दी गई। फाल्गुन शुक्ला ३ संवत् १९९० को दिन के ग्यारह से एक बजे तक का समय युवाचार्य पदवी प्रदान करने के लिए निश्चिय किया गया। इस समय तक ६५ संत व साध्वियां तथा लगभग सात हजार दर्शनार्थी विभिन्न स्थानों से आकर जावद में एकत्रित हो चुके थे। शुभ-मुहूर्त से आचार्य श्री ने 'नन्दीसूत्र' का पाठ करके अपनी चादर युवाचार्य श्री गणेशीलाल जी महाराज को ओढा कर उन्हे युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया। इस अवसर पर आचार्य श्री के उद्बोधनों से प्रभावित

होकर त्रिहार के भूकम्प पीडितों की सहायतार्थ कार्फेंस ने " भूकम्प रिलीफ फण्ड " स्थापित किया।

वेश्या का उद्धार

सवत् १९९१ मे आचार्य श्री का चातुर्मास कपासन मे सम्पन्न हुआ। चातुर्मास के पश्चात् विहार करते हुए आप उदयपुर पधारे। आपके उपदेशामृत का पान करने वालो मे उदयपुर की प्रसिद्ध वेश्या मुमताज भी थी। पूज्य श्री के उपदेशो से मुमताज इतनी प्रभावित हुई कि उसने जीवन भर के लिए वेश्यावृत्ति का त्याग कर दिया तथा मास मदिरा के सेवन का भी परित्याग कर दिया। वेश्या का जीवन बदल गया। स्थानीय कन्या-विद्यालय की प्रधानाध्यापिका ने उसे बहिन कह कर अपने गले से लगा लिया। यह पूज्य महाराज के उपदेश का ही प्रभाव था कि एक पतित आत्मा अपने उद्धार का आधार पा सकी।

अधिकार-त्याग

संवत् १९९२ मे रतलाम चातुर्मास के अवसर पर आचार्यश्री ने मन ही मन निश्चय किया कि वृद्धावस्था के कारण अब मुझे अपने संघ की देखरेख तथा व्यवस्था आदि का उत्तरदायित्व युवाचार्य श्री गणेशीलाल जी

महाराज को दे देना चाहिए । समय रहते बड़ों का अधिकार त्याग करना श्रेयस्कर है ताकि अपने संरक्षण व निरीक्षण में छोटों को उत्तरदायित्व वहन करने का प्रशिक्षण प्राप्त हो सके । इस विचार से प्रेरित हो उन्होने एक अधिकार-पत्र तैयार किया, जिसमे अपने संघ के सभी सन्तो व साध्वियों तथा श्रावक-श्राविकाओ को यह सूचित किया गया कि उन्होने (आचार्यश्री ने) सघ सम्बन्धी सभी कार्यों व नियमो के पालन आदि के लिए सघ को प्रेरित करने तथा सन्त व सतियो को आज्ञा मे रखने आदि के समस्त अधिकार युवाचार्य श्री गणेशीलाल जी महाराज को दे दिये है, अतः सभी उनका आदेश माने तथा श्री गणेशीलाल जी पूर्वजो के गौरव को ध्यान मे रखते हुए श्रीसघ का कार्य विवेकपूर्वक करें । उन्होने तत्सम्बन्धी घोषणा अपने आश्विन कृष्णा ११, सोमवार तारीख २३ सितम्बर, सन् १९३५ के प्रवचन मे की तथा लिखित अधिकार-पत्र प्रदान किया ।

चातुर्मास के पश्चात् आपने पुनः राजस्थान की ओर विहार किया तथा चित्तौड़, भीलवाडा, गुलाबपुरा, विजयनगर, ब्यावर, जैठाणा, पाली आदि अनेक स्थानो को पवित्र किया । जैठाणा में पूज्य श्री हस्तीमल जी महाराज तथा आप— दोनो आचार्यो का हार्दिक तथा

प्रेममय सम्मेलन हुआ ।

आचार्य श्री गुजरात में

गुजरात के लोगो के बहुत समय से हो रहे आग्रह-भरे निवेदनो को ध्यान मे रखते हुए आचार्य श्री ने गुजरात की ओर विहार किया । पालनपुर, मेहसाणा, वीरमगाम, बढवाण आदि स्थानो पर विचरण करते हुए आप राजकोट पधारे तथा स० १९९३ का चातुर्मास यही सम्पन्न हुआ । गुजरात प्रवेश के पश्चात् से ही आपने गुजराती मे प्रवचन देना आरम्भ कर दिया था । राजकोट चातुर्मास के अवसर पर राष्ट्रपिता महात्मा गाधी तथा लोहपुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल भी आपसे भेंट करने पधारे । कार्तिक शुक्ला चतुर्थी को आपश्री की देखरेख मे प० अम्बिकादत्त जी शास्त्री द्वारा तैयार अनुवाद के साथ 'श्री सूयगडाग सूत्र' का प्रकाशन समाज द्वारा किया गया ।

हरिजनो को सम्मानजनक स्थान

राजकोट मे चातुर्मास के बाद आप गुजराज मे ही विहार करते हुए धर्म-जागरण करते रहे। जैतपुर का एक प्रसग उल्लेखनीय है । आपकी प्रवचन सभा मे अनेक हरिजन स्त्री-पुरुष भी आए । लोगो ने उन्हे

व्याख्यान पीठ से काफी दूर वैठा दिया । आचार्य श्री को उनका यह अपमान सहन नही हुआ । उन्होने उस दिन इस सम्वन्ध मे प्रभावशाली प्रवचन दिया । परिणाम यह हुआ कि दूसरे दिन से उन्हे आगे वैठने को स्थान दिया गया । आचार्य श्री के उपदेशो से इन लोगो ने मास-मदिरा का त्याग किया ।

पूज्य आचार्य श्री ने अपने प्रवचनो से सारे गुजरात मे सामाजिक सुधार व धार्मिक-जागरण का वातावरण बना दिया । गुजरात प्रदेश के अनेक शासको, सामन्तो व जागीरदारो ने भी आपका भावभीना स्वागत किया । इनमे से कइयो ने आपके उपदेशो से प्रभावित होकर अपनी-अपनी रियासतों तथा ताल्लुको मे हिंसा पर प्रतिबन्ध लगा दिया । गुजरात मे आप जहां भी गए, विशाल जन-समूह आपके स्वागत मे उमड़ पड़ा ।

संवत् १९९४ का चातुर्मास मोरवी में सम्पन्न करने हेतु आप साधु-मर्यादा के अनुसार स्वीकृति दे चुके थे । अतः आपने १६ जून को जामनगर से विहार किया । परन्तु लगभग पांच मील ही चल पाये थे कि आपके दाएं पैर में वात का प्रकोप जो पहले भी हो चुका था, पुनः इतना बढ गया कि आपका आगे विहार

कठिन हो गया । अन्ततः सभी के परामर्श से यही निश्चित रहा कि यह चातुर्मास जामनगर मे ही किया जाय ।

धार्मिक पर्वों पर खेली जाने वाली जुआबन्दी

मोरवी नरेश तथा वहा के श्रीसघ के अत्यधिक आग्रह के कारण आचार्य श्री को संवत् १९९५ का चातुर्मास मोरवी मे करने को बाध्य होना पडा । यहा उनके प्रवचनो मे अत्यधिक भीड रहा करती थी। जन्माष्टमी के पर्व पर आचार्य श्री ने श्रीकृष्ण चरित्र पर ओजस्वी व मार्मिक प्रवचन दिया तथा इस अवसर पर व अन्य धार्मिक पर्वों पर खेली जाने वाली जुआ-प्रथा की प्रभावशाली शब्दो मे निन्दा की । प्रवचन मे मोरवी के राजा तथा अनेक राज्याधिकारी उपस्थित थे । इस प्रवचन का यह परिणाम हुआ कि राजा साहब ने कानून बना कर जुआप्रथा बन्द करवा दी और इनके ठेके से होने वाली हजारों की वार्षिक आमदनी का लोभ ठुकरा दिया ।

साधु-माहात्म्य : उल्लेखनीय प्रसंग

मोरवी चातुर्मास के पश्चात् विहार करके आप राजकोट पधारे । एक श्रेष्ठ साधु किस प्रकार अपने

व्यक्तित्व से लोगों को चमत्कृत कर देता है, इस तथ्य से सम्बन्धित दो प्रेरक प्रसंग यहा उद्धृत किए जा रहे है ।

(१) भावनगर के एक वोहरा सज्जन उन दिनों अपने एक मित्र के यहा आकर ठहरे हुए थे । यह वोहरा सज्जन गाधी जी के कट्टर भक्त थे और इनका यह पक्का विश्वास था कि हिन्दुस्तान मे गाधी जी के अतिरिक्त और कोई सच्चा महात्मा ही नही है। उसके मित्र प्रतिदिन जब आचार्य जी के प्रवचन मे जाते तो उससे आचार्य श्री के प्रवचन की प्रशमा करते हुए प्रवचन मे चलने का आग्रह करते । परन्तु उन सज्जन का एक ही उत्तर था कि वे किसी का व्याख्यान नही सुनते । सब साधु ढोगी ही अधिक हैं। मित्र की प्रतिदिन की प्रशसा और आग्रहवश आखिर तीसरे दिन वे प्रवचन मे गए । प्रवचन क्या था, मानो वाणी मे जादू का असर था । वे चकित रह गए और बडी उत्कण्ठापूर्वक पूरा उपदेश श्रवण करते रहे । उपदेश समाप्त होने के बाद वे आचार्य श्री की सेवा मे उपस्थित होकर कहने लगे, "महाराज ! मैं बड़े घाटे मे आ गया । तीन दिन से राजकोट में हूँ और आज ही उपदेश सुन पाया । दो दिन मेरे वृथा चले गए। अब इस घाटे की पूर्ति करनी होगी और वह इस तरह कि

आप भावनगर पधारे। भावनगर की जनता को आपका लाभ दिलवाऊंगा और मैं भी लाभ लूंगा। तब मेरा घाटा पूरा होगा।" पुन कहने लगे—'आप जैसे संत बड़े भाग्य से मिलते हैं। मैं अच्छी तकदीर लेकर आया था कि आपके दर्शन हो गए।"

वोहरा सज्जन भक्ति-भाव से गद्गद् हो गए। अभी साधुओ के वारे मे उनका जो भ्रम था, वह दूर हो गया।

(ख) इसी प्रकार आचार्य श्री के प्रवचन में एक दिन अहमदावाद के करोडपति परिवार की सदस्या श्रीमती मृदुला वहिन उपस्थित हुई। आचार्य श्री का उदार और प्रभावशाली प्रवचन सुन कर वह कहने लगी— "साधुओ के विषय में मेरा अनुभव कटु है। मेरा खयाल था कि साधु हमारे समाज के कलंक हैं। पर आज आचार्य श्री का उपदेश सुन कर मुझे लगा कि मेरा खयाल भ्रमपूर्ण था। "सब साधु ढोंगी नही होते—सभी साधु एक सरीखे नहीं हैं। मेरा भ्रम दूर करने के लिए मैं पूज्य आचार्य श्री की बडी आभारी हूं।"

एक चरित्र-सम्पन्न व योग्य व्यक्तित्व किस प्रकार

अपने वर्ग, परिवार, समाज तथा राष्ट्र का नाम उज्ज्वल कर देता है, ये प्रसंग इसके सुन्दर उदाहरण हैं। साधु वर्ग मे कतिपय श्रेष्ठ साधु हो तो वे साधुओ के बारे मे, शिक्षित व प्रबुद्धजनो मे प्रचलित भ्रान्त धारणाओं को बदल सकते हैं।

संवत् १९९६ का चातुर्मास अहमदाबाद में हुआ। इस चातुर्मास-काल मे आचार्य श्री प्रायः बीमार ही रहे। यह प्रतीत होने लगा था कि उनके दिन अब निकट आ रहे है। न उनमे पहले जैसा उत्साह ही दिखाई देता था और न वह गम्भोर गर्जना से युक्त तेजस्वी वाणी। लगता था, अब उन्हे विश्राम और स्थिरवास की आवश्यकता है।

अहमदाबाद में चातुर्मास पूरा करने के बाद आचार्य श्री ने पुन: राजस्थान की ओर विहार किया। सवत् १९९७ का चातुर्मास आपने बगडी मे किया। आचार्य श्री अपने जीवन के चौसठ वर्ष पूरे कर चुके थे और अब वृद्धावस्था तथा लगातार बीमारी ने उनको अशक्त बना दिया था। यह समय वस्तुतः अब उनके स्थिरवास का था। इसके लिए विभिन्न स्थानो से उनके पास अनेक लोगो के आग्रह भरे निवेदन थे। अजमेर, ब्यावर, रतलाम, उदयपुर, जलगांव, भीनासर,

बीकानेर, जोधपुर आदि स्थानो के लोग उनसे अपने-अपने नगर मे विराजने की प्राथना बार-बार कर रहे थे । वे बीकानेर की ओर विहार करने की भावना व्यक्त कर चुके थे । मार्ग मे वलु दा नामक स्थान पर वे पुनः अस्वस्थ हो गए । कुछ दिन वहा रुक कर तथा स्वास्थ्य लाभ कर वे नोखा, देशनोक, उदयरामसर, भीनासर होकर बीकानेर पधारे । सवत् १६६८ का चातुर्मास उन्होने भीनासर मे बिताया ।

श्री जवाहर किरणावली

इस चातुर्मास काल मे अशक्ति के कारण आचार्य श्री प्रवचन देने मे असमर्थ थे, अत मुनि श्री श्रीमल्ल जी महाराज और मुनि श्री जौहरीमल जी महाराज प्रवचन किया करते थे । आचार्य महाराज व्याख्यान भवन मे आकर मौन बैठे रहते थे । जिस तेजस्वी और अद्वितीय वक्ता के प्रवचन सुन कर श्रद्धालुगण अभिभूत हो जाते थे, उसका यह मौन कैसी परवशता थी ? इस परिस्थिति मे भीनासर के श्रद्धालु सेठ श्री चम्पालाल जी बाठिया के हृदय मे यह विचार आया कि पूज्य श्री के प्रवचनो को सकलित व सुसम्पादित कर प्रकाशित किया जाए । तदनुसार पं० शोभाचन्द्र जी भारिल्ल के सम्पादकत्व मे श्री जवाहर किरणावली के कई भागों का प्रकाशन किया गया ।

कार्तिक शुक्ला चतुर्थी को भीनासर मे आचार्य महाराज का जन्म-दिवस बहुत ही उत्साहपूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर आयोजित सभा में वक्ताओं ने आचार्य श्री के जीवन व कृतित्व पर विस्तार से प्रकाश डाला।

दीक्षा स्वर्ण-जयन्ती

मार्गशीर्ष शुक्ला २, संवत् १९९८ तदनुसार १८ फरवरी, १९४२ रविवार को पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज ने अपनी दीक्षा का पचासवां वर्ष पूरा कर लिया था। इस समय आप चातुर्मास समाप्त कर भीनासर से बीकानेर पदार्पण कर गए थे। इस उपलक्ष्य मे आपका दीक्षा स्वर्ण-महोत्सव सभी श्रीसघो द्वारा अपने-अपने स्थानो पर अत्यधिक उत्साहपूर्वक मनाया गया। श्री जैन गुरुकुल ब्यावर मे आयोजित सभा मे निम्न महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव भी पास किए गए—

(१) जैन समाज के ज्योतिर्धर, जैन-संस्कृति के प्राणरक्षक और प्रचारक परम-प्रतापी पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज के संयम-साधना के पचास वर्ष पूर्ण करने के अवसर पर ब्यावर जैन गुरुकुल हार्दिक प्रमोद व्यक्त करता है और शासनदेव से

प्रार्थना करता है कि पूज्य श्री का मार्ग-दर्शन हमें चिरकाल तक मिलता रहे ।

(२) पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज के उपदेश सार्वभौमिक, मौलिक, शास्त्रीय रहस्यो से परिपूर्ण और युग के अनुकूल हैं । उनमे अध्यात्म, धर्म और राष्ट्रीयता की असाधारण संगीति है । ऐसे लोकोपयोगी साहित्य के प्रकाशन और प्रचार की दिशा मे सक्रिय होकर विशेष प्रयत्न करने के लिए यह सभा श्री हितेच्छु श्रावक मण्डल रतलाम, श्री श्वे. साधुमार्गी जैन हितकारिणी संस्था बीकानेर, श्री जैन ज्ञानोदय सोसाइटी राजकोट तथा अन्य सस्थाओ से अनुरोध करती है ।

(३) यह सभा ऐसे महान् प्रभावक आचार्य और धर्मोपदेशक के जीवन चरित्र तथा अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन आवश्यक समझती है और रतलाम हितेच्छु श्रावक मण्डल से आग्रह करती है कि शीघ्र ही पूज्य श्री का जीवन-चरित्र प्रस्तुत किया जाए ।

(४) यह सभा जैन समाज की महान् विभूति पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. के पचास वर्ष जैसे सुदीर्घ-साधक-जीवन की स्वर्ण-जयन्ती के उपलक्ष्य में कोई

जीवन्त-स्मारक रखने के लिए समाज से साग्रह-अनुरोध करती है और समाज के कर्णधारों से प्रार्थना करती है कि इस शुभ-अवसर पर कोई महान् कार्य अवश्य हाथ में लें और उसे सफल बनावें ।

वस्तुतः ये प्रस्ताव बहुत ही महत्त्वपूर्ण थे और समय आने पर समाज ने इनकी भावना के अनुकूल आचार्य श्री की स्मृति को चिरस्थायी रखने के लिए कार्य भी किया ।

४ : महाप्रस्थान

वृद्धावस्था को प्राप्त आचार्य श्री का शरीर अब प्राय: रुग्ण रहने लगा था। अशक्तता अधिक बढ गई थी। बीकानेर मे उनके घुटने मे पुनः दर्द हो गया। वे वहां से भीनासर आ गए तथा सेठ चम्पालाल जी बाठिया के विशाल पोषध शाला भवन में ठहरे। ज्येष्ठ शुक्ला पूर्णिमा, दिनाक ३० मई, १९४२ को उनको पक्षाघात का आक्रमण हुआ और उनका दाहिना भाग शिथिल हो गया। युवाचार्य श्री गणेशीलाल जी महाराज को भी सूचना दी गई। वे भी भीनासर आ पहुचे। ऐसी स्थिति मे आचार्य श्री को अपना अन्त सन्निकट प्रतीत होने लगा। अतः उन्होंने प्राणिमात्र से अन्तिम क्षमायाचना करने का विचार कर १८ जून, १९४२ को अपने निम्न उद्गार प्रकट किए—

(१) साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका रूप चतुर्विध श्री सघ से मैं अपने अपराधो के लिए अन्तः करण पूर्वक क्षमा-याचना करता हूँ ।

(२) मेरा शरीर दिन-प्रतिदिन क्षीण होता जा रहा है । जीवन-शक्ति उत्तरोत्तर घट रही है । इस बात का कोई भरोसा नही है कि इस भौतिक शरीर को छोड कर प्राणपखेरू कब उड जाय । ऐसी दशा मे जब तक ज्ञान-शक्ति विद्यमान है, भले-बुरे की पहिचान है, तब तक ससार के सभी प्राणियो से विशेपतया चतुर्विध श्री संघ से क्षमायाचना करके शुद्ध हो लेना चाहता हूँ । मेरी आप सभी से विनम्र प्रार्थना है कि आप भी शुद्ध हृदय से मुझे क्षमा प्रदान करे ।

(३) मेरी अवस्था ६७ वर्ष की है । दीक्षा लिए भी पचास वर्ष से अधिक हो गए हैं । इस समय मे मेरा चतुर्विध संघ से विशेष सम्पर्क रहा है । सं० १९७५ से श्री सघ ने तथा पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज साहव ने श्री संघ के शासन का भार मेरे निर्बल कन्धों पर रख दिया था । पूज्य श्री श्रीलाल जी महाराज के समान प्रतापी महापुरुष के आसन पर बैठते हुए मुझे अपनी कमजोरियो का अनुभव हुआ था, फिर भी गुरु महाराज तथा श्री संघ की आज्ञा का पालन करना

अपना कर्त्तव्य समझकर मैंने उस आसन को ग्रहण कर लिया। इसके बाद शासन की व्यवस्था के लिए मैंने समयोचित बहुत से परिवर्तन और परिवर्द्धन शास्त्रानुसार किए हैं। सम्भव है, उनमे से कुछ बातें किसी को गलत या बुरी लगी हो। मैं उनके लिए सभी से क्षमा मागता हूँ।

(४) मैं साधुवर्ग का विशेष क्षमाप्रार्थी हूँ। उनके साथ मेरा गुरु और शिष्य के रूप मे, शासक और शास्य के रूप मे, सेव्य और सेवक के रूप मे तथा दूसरे कई प्रकार से घनिष्ठ सम्बन्ध रहे हैं। मैंने शासनोन्नति के लिए, ज्ञान, दर्शन और चारित्र की रक्षा के लिए, सगठन-वृद्धि के लिए शास्त्रानुमोदित कई नियमोपनियम बनाए हैं, जिन्हे मुनियो ने सदा वरदान की तरह स्वीकार किया है। फिर भी यदि मेरे किसी व्यवहार के कारण किसी मुनि के हृदय मे चोट लगी हो, उन्हे किसी प्रकार का कष्ट पहुचा हो तो मैं उसके लिए बार-बार क्षमा याचना करता हूँ। मेरी आत्मा की शाति और निर्मलता के लिए वे मुझे क्षमा प्रदान करें। मैने अपनी आत्मा को स्वच्छ एव निर्वैर बना लिया है।

(५) अपने सघ का संचालन करने और

सामाजिक व्यवस्था करने के लिए मुझे अन्यान्य सम्प्रदायों के आचार्यों तथा बहुत से स्थविर मुनियों के सम्पर्क में आना पड़ा है। किसी किसी बात पर मुझे उनका विरोध भी करना पड़ा है। उस समय बहुत सम्भव है, मुझसे कोई अनुचित या अविनय युक्त व्यवहार हो गया हो। मैं अपने उस व्यवहार के लिए उन सभी से क्षमा मांगता हूँ। मेरी प्रार्थना पर ध्यान देकर वे सभी आचार्य तथा स्थविर मुनि मुझे क्षमा प्रदान करने की कृपा करें।

(६) मैं जिस बात को हृदय से सत्य मानता हूँ उसी का उपदेश देता रहा हूँ। बहुत से व्यक्तियों से मेरा सैद्धान्तिक मतभेद भी रहा है। सत्य का अन्वेषण करने की दृष्टि से उनके साथ चर्चा-वार्ता करने का प्रसंग भी बहुत बार आया है। यदि उस समय मेरे द्वारा किसी प्रकार प्रतिपक्षियों का मन दुखा हो, उन्हे मेरी कोई बात बुरी लगी हो तो उसके लिए मैं हार्दिक क्षमा चाहता हूँ। मेरा उनके साथ केवल विचार-भेद ही रहा है। वैयक्तिक रूप से मैंने उन्हे अपना मित्र समझा है और अब भी समझ रहा हूँ। आशा है, वे मुझे क्षमा प्रदान करेगे।

(७) मैंने जो व्याख्यान दिए हैं, उनमें से

मण्डल ने कई-कई चातुर्मासों के व्याख्यानों का संग्रह कराया है। इस विषय मे मेरा कहना है कि जिस समय जो-जो मैंने कहा है वह जैन आगमो और निर्ग्रन्थ प्रवचनो को दृष्टि मे रख कर ही कहा है। यह बात दूसरी है कि समय के परिवर्तन के साथ-साथ द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के अनुसार विचारो मे भी परिवर्तन होता रहता है। फिर भी मैं छद्मस्थ हूँ। मुझ से भूल हो सकती है। मैं सत्य का गवेषक हूँ। सभी को सत्य ही मानना चाहिए। असत्य के लिए मेरा आग्रह नही है। मुझे अपनी बात की अपेक्षा सत्य अधिक प्रिय है।

(८) मेरी शारीरिक अशक्ति के बाद और पहले जो साधु मेरी सेवा मे रहे हैं, उन्होने मेरी सेवा करने मे कुछ भी बाकी नही रहने दिया। अपने कष्टों को भूल कर वे प्रत्येक समय, प्रत्येक प्रकार से मेरी सेवा मे तत्पर रहे हैं। स्वय सर्दी-गर्मी एव भूख-प्यास के परीषहो को सह कर भी उन्होने मेरी सेवा का ध्यान रखा है। इसके लिए मैं उनकी सेवा का हार्दिक अनुमोदन करता हूँ। उनके द्वारा की गई सेवा का आदर्श नवदीक्षितो के लिए मार्गदर्शक बनेगा।

(९) लगभग आठ वर्ष से शारीरिक अशक्ति

के कारण मैंने सघ-शासन का भार युवाचार्य श्री गणेशीलाल जी को सौप रखा है । उन्होने जिस योग्यता, परिश्रम और लगन के साथ इस कार्य को निभाया है तथा निभा रहे हैं, वह आपके समक्ष है। मुझे इस बात का परम सन्तोष है कि युवाचार्य श्री गणेशीलालजी ने अपने को इस उत्तरदायित्वपूर्ण पद का पूर्ण अधिकारी प्रमाणित कर दिया है और कार्य अच्छी तरह सम्भाल लिया है । साथ में इस बात की भी मुझे प्रसन्नता है कि श्री संघ ने भी श्रद्धापूर्वक इनको अपना आचार्य मान लिया है । इनके प्रति आपकी भक्ति तथा आप सभी का पारस्परिक प्रेम उत्तरोत्तर वृद्धिगत होता रहे और इनके द्वारा भव्य प्राणियों का अधिकाधिक कल्याण हो, यही मेरी हार्दिक अभिलाषा है ।

(१०) सज्जनो ! जिसने जन्म लिया है, उसकी मृत्यु अवश्यम्भावी है । संसार मे जन्म-मरण का चक्र चलता ही रहता है । यह शरीर तो एक प्रकार का चोगा है जिसे प्राणी स्वय माता के गर्भ मे तैयार करता है और पुराना होने पर छोड देता है । पुराने चोगे को छोड़ कर नए नए चोगे पहनते जाने का क्रम जीव के साथ अनादिकाल से लगा हुआ है । इसमें हर्ष या विषाद की कोई बात नहीं है । हर्ष की

बात तो हमारे लिये तब होगी जब इस चोगे को इस रूप मे छोडेंगे कि फिर नया न धारण करना पडे। वास्तव में नवीन चोगे का धारण करना ही बन्धन है और उसे उतारना मुक्ति है। जब यह चोगा हमेशा के लिए छूट जाएगा, वही मोक्ष है। अतः यह चोगा छूटने पर भी आत्मसमाधि कायम रहे, यही भावना है।

(११) अन्त मे मैं यही चाहता हूँ कि मैंने ससार त्याग करके भागवती दीक्षा स्वीकार की है। उसकी आराधना मे जो प्रयत्न अब तक किया है, उसमें मेरी शारीरिक या मानसिक स्थिति कैसी भी रहे, भग न हो। उसमें प्रतिदिन वृद्धि हो और मैं आराधक बना रहूं।

आचार्य श्री के ये उद्गार व्याख्यान-सभा में पढकर सुनाए गए। सुन कर लोगो के नेत्र सजल हो गए। उन्हे उनके वियोग का अहसास होने लगा था। लगता था जैसे आचार्य श्री के उद्गार मृत्यु के पूर्व की घोषणा हो। पूज्य श्री का रुग्ण शरीर और गिरता स्वास्थ्य इसका आभास भी दे रहा था। लोगो का मन-बाध उमड़ पड़ा। सभा में विषाद सा छा गया।

आचार्य श्री पक्षाघात से पीड़ित तो थे ही, इधर कमर के पीछे बाईं ओर जहरी फोड़ा (Carbuncle) और हो गया। बीकानेर के प्रधान शल्य-चिकित्सक डा० एलन आपरेशन आवश्यक समझते थे, साथ ही आपरेशन से उत्पन्न खतरे को भी ध्यान में रखा जाना जरूरी था। आपरेशन के बिना ही कुछ दिन बाद यह फोड़ा स्वतः ही फूट गया। आचार्य श्री इन दोनों की असह्य वेदना को शान्तभाव से सहन करते रहे। फोड़े को बिलकुल ठीक होने मे लगभग छह मास का समय लग गया।

इस अस्वस्थता की स्थिति में आचार्य श्री के जीवन का अन्तिम चातुर्मास काल भीनासर मे ही व्यतीत हुआ। इस समय देश के विभिन्न भागो से अनेक श्रद्धालु भक्त दर्शनार्थ वहां आए। लोगो को शायद यह अनुमान हो चला था कि आचार्य श्री के सभवतः ये अन्तिम दर्शन ही हैं। अतः पूरे चतुर्मास काल मे भीनासर मे दर्शनार्थियों की भीड़ लगी रही।

फोडा ठीक हो जाने के पश्चात् आचार्य श्री के स्वास्थ्य मे कुछ सुधार हुआ। तभी जुलाई १९४३ के आरम्भ मे उनकी गर्दन पर भयकर फोड़ा निकल आया तथा शरीर के अन्य भागो पर भी उसी तरह के छोटे

छोटे कई अन्य फोडे निकल आए।

आषाढ शुक्ला अष्टमी दिनांक १० जुलाई १९४३ को आचार्य श्री की दशा यकायक अधिक निराशाजनक हो गई। युवाचार्य श्री गणेशीलाल जी म० ने पूज्य श्री के कथानुसार तथा अन्य मुनियो एव श्री सघ की अनुमति से लगभग पोने बारह बजे तिविहार सथारा तथा पुन: एक बजे चौविहार संथारा करा दिया। उसी दिन पाच बजे के लगभग उनकी महान आत्मा ने नश्वर शरीर का बन्धन त्याग कर महाप्रस्थान किया। आचार्य श्री जवाहरलाल जी म० अपने अनेक प्रशसकों, शिष्यो, श्रद्धालु भक्तो-श्रावक-श्राविकाओ को रोते बिलखते छोड चल दिये।

अन्तिम समय उनके मुखमण्डल पर एक दिव्य शान्ति व सौम्य भाव विराजमान था। लगता था, वे गहरी समाधि मे लीन हैं। जिसने भी आचार्य श्री की अन्तिम छवि को देखा, वह निहाल हो गया।

श्मशान-यात्रा

आचार्य श्री की श्मशान-यात्रा आषाढ शुक्ला ९ को प्रात. प्रारम्भ हुई। सेठ श्री चम्पालालजी बाठिया

ने इस अवसर के लिए एक सुन्दर रजत-रथी का निर्माण करवा लिया था। निश्चित समय पर उनकी श्मशान-यात्रा प्रारम्भ हुई। आचार्य श्री का शव स्वर्णमण्डित रजत-रथी मे रखा गया। पूज्य श्री की शव-यात्रा में राज्य की तरफ से भेजे हुए नगाडा, निशान और बैंड सबसे आगे थे। स्त्री-पुरुषों का एक विशाल समूह इस अवसर पर एकत्र था। इस दिन राज्य ने पूज्य श्री के सम्मान मे सार्वजनिक अवकाश घोषित किया। सभी कार्यालय, शैक्षणिक संस्थाए तथा बीकानेर व उसके उपनगरों के समस्त बाजार भी उनके सम्मान में बन्द रहे। भीनासर तथा गंगाशहर में घूमती हुई उनकी शव-यात्रा १२ बजे श्मशान में पहुंची। चन्दन, घृत, कपूर, खोपरा आदि सुगन्धित पदार्थों से युक्त चिता पर पूज्य श्री का रजत-रथी-सहित शव रखा गया तथा अग्नि संस्कार सम्पन्न किया गया।

आचार्य श्री के स्वर्गवास का समाचार समस्त देश में तुरन्त फैल गया। स्थान-स्थान पर शोक-सभाएं आयोजित की गई तथा पूज्य श्री को श्रद्धांजलियां अर्पित की गई।

आषाढ़ शुक्ला १० को प्रातःकाल ९ बजे बीकानेर,

गगाशहर और भीनासर के चतुर्विध संघ की सम्मिलित शोकसभा हुई । सभा मे आचार्य श्री को श्रद्धाजलि अर्पित करने के बाद उनकी स्मृति मे स्थायी कोष स्थापित कर समाज-सेवा का कोई कार्य करने का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया। इसके लिए उसी समय लगभग एक लाख रुपये की राशि का प्रावधान हो गया । तदनुसार पूज्य श्री की स्मृति मे भीनासर मे 'श्री जवाहर विद्यापीठ' नाम से एक संस्था स्थापित की गई।

५. जीवन—क्रम : उल्लेखनीय तथ्य

महिमावान् साधक श्रीमद् जवाहराचार्य जी की जीवन—कथा प्रथम चार अध्यायों में वर्णित है। इस वर्णन मे उनके जीवन से सम्बन्धित कतिपय उल्लेखनीय तथ्य छोड़ दिए गए थे ताकि कथा—वर्णन मे एकरूपता बनी रहे। यथा— उनके सान्निध्य मे आने वाले तत्कालीन भारत के राजनैतिक, सामाजिक व धार्मिक क्षेत्र के अनेक महत्त्वपूर्ण व्यक्तियो का उल्लेख, भेट-वार्ता तथा परिचय उस क्रम मे अनावश्यक समझे गये, वे इस अध्याय मे स्वतन्त्र रूप से प्रसगोल्लेख सहित दिये जा रहे है। इसी प्रकार उनके द्वारा दीक्षित मुनिराजो का भी नामोल्लेख इसी अध्याय मे किया जा रहा है। उनके जीवन के महत्त्वपूर्ण वर्ष, तथा चातुर्मास आदि का भी यद्यपि यथाक्रम उल्लेख

हो गया है फिर भी उनका एक साथ उल्लेख अपेक्षित समझ कर यहा किया जा रहा है । तात्पर्य यह कि प्रस्तुत अध्याय आचार्य श्री की जीवन-कथा का पूरक अश है । इस अध्याय मे वर्णित तथ्यो से हमे उनके प्रभाव, उनकी लोकप्रियता, उनकी कर्मठता, अपने मिशन के प्रति उनकी निष्ठा तथा राष्ट्र के धार्मिक, सामाजिक व राजनैतिक जीवन मे उनकी भूमिका के मूल्याकन मे सहायता मिल सकेगी ।

समकालीन विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा सत्संग-लाभ

महात्मा गांधी

संवत् १९९३ में आचार्य श्री का राजकोट मे चातुर्मास था । २९ अक्टूबर को महात्मा गांधी कार्य-वश राजकोट आए । उन्हे आचार्य श्री की ओजस्वी उपदेश-शैली, उत्कृष्ट व उदार विचार-धारा तथा सयम-परायणता का परिचय मिल चुका था । अत. उन्होने व्यस्त कार्यक्रम मे से पूज्य आचार्य श्री से भेंट करने तथा सत्सगति का लाभ लेने का निश्चय कर लिया । तदनुसार जिस दिन वे राजकोट से विदा होने वाले थे, उस दिन उन्होने सध्या से कुछ पहले पूज्यश्री के दर्शनार्थ आने की सूचना भिजवा दी । जनता को

दर्शनार्थ आई । पूज्य आचार्य श्री ने अपने प्रवचन मे 'बा' का आदर्श प्रस्तुत करते हुए महिलाओं को खादी पहनने और सादगी से रहने का उपदेश दिया । प्रव-चन के पश्चात् 'बा' से भी कुछ बोलने के लिए कहा गया । वे बोली –" मैं आज अपना अहोभाग्य समझती हूँ कि पूज्य श्री के दर्शन हुए । मैं जिस उद्देश्य से आई थी वह पूरा हो गया । मुझे अब बोलने की आवश्यकता नही रही । पूज्य श्री ने मेरा मन्तव्य पूरा कर दिया है ।

श्री विट्ठलभाई पटेल

इसी चातुर्मास काल मे केन्द्रीय धारा-सभा के प्रेसीडेन्ट श्रीयुत् विट्ठलभाई पटेल भी पूज्यश्री के दर्शन करने व प्रवचन सुनने आए । आचार्य श्री के व्यापक दृष्टिकोण और उच्च विचारो से, उनके तप और त्याग से तथा वक्तृत्व शक्ति से वे बड़े प्रभावित हुए और उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की ।

सेनापति बापट

संवत् १६७१ में चातुर्मास से पूर्व आचार्य श्री जवाहरलाल जी पारनेर पधारे । उनके दैनिक प्रवचनों

मे उपस्थित रहने वाले अनेक व्यक्तियों में एक विशिष्ट व्यक्ति थे सेनापति बापट । उनकी स्मरण-शक्ति और प्रतिभा का इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि वे आचार्य श्री के प्रवचन को सुनने के तुरन्त बाद उसे मराठी कविता मे शब्द-बद्ध कर सुना दिया करते थे। आचार्य श्री के प्रति उनकी बड़ी श्रद्धा थी ।

बापट साहब का सक्षिप्त परिचय यहा उद्धृत करने का लोभ हम सवरण नहीं कर पा रहे हैं । विद्यार्थी अवस्था मे वे बडे प्रतिभाशाली थे । आ सी. एस की परीक्षा मे वे सर्वप्रथम आए। अग्रेजी नौकर-शाही रूपी मशीन का एक पुर्जा बनने के लिए वे इगलैण्ड भेजे गए । लाला लाजपतराय की भारत मे गिरफ्तारी होने के अवसर पर उन्होने वहा एक भाषण दिया जो सरकार की आखो मे बहुत खटका । सरकार उन्हे खतरनाक आदमी समझने लगी और पुलिस उन पर निगाह रखने लगी । बापट-साहब ने आई सी. एस को छोड कर वहा रहते हुए बैरिस्टरी की परीक्षा पास की । इगलैण्ड से आप जर्मनी चले गए और बम बनाना सीखा तथा भारत आकर नवयुवको को बम बनाना सिखाया और ब्रिटिश शासन को उखाड फेंकने के कार्य में सलग्न हो गए। सरकार उनसे सतर्क रहती और उनकी निगरानी रखी जाती । उनकी दिनचर्या

के महत्त्वपूर्ण कार्य थे—प्रात काल ही टोकरी, कुदाली और झाडू लेकर घर से निकल जाना तथा सड़कें व नालियां साफ करना, दिन में अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओ के लिए लेख लिखना, सायकाल गली-मुहल्लो मे जा-जाकर देशोत्थान सम्बन्धी प्रवचन करना तथा रात्रि मे अछूत वालको को पढाना।

प्रोफेसर राममूर्ति

संवत् १९७२ मे जब आचार्य श्री अहमदनगर में चातुर्मास कर रहे थे, तब कलियुगी भीम कहे जाने वाले प्रो० राममूर्ति अपनी सरकस कम्पनी के साथ अहमदनगर आए। अहमदनगर मे मुनिश्री के उपदेशों की उस समय बडी प्रसिद्धि थी। प्रो० राममूर्ति भी वह ख्याति सुन कर अपने कार्यकर्ताओ के साथ आचार्य श्री का प्रवचन सुनने आए। आचार्य श्री का प्रवचन सुन कर वे बड़े प्रभावित हुए और प्रवचन के पश्चात् उन्होंने कहा—"इस समय मैं क्या बोलूं? सूर्य के निकल जाने पर जिस प्रकार जुगनू का चमकना अनावश्यक है, उसी प्रकार आचार्य श्री के अमृततुल्य उपदेश के बाद मेरा कुछ बोलना अनावश्यक है। मैं न वक्ता हूँ न विद्वान हूँ। मैं तो एक कसरती पहलवान हूँ। किन्तु बड़े-बड़े विद्वानों का व्याख्यान सुनने का

मुझे शोक है। आज आचार्यश्री के उपदेश को सुन कर मेरे हृदय पर जो प्रभाव पडा वह आज तक किसी के उपदेश से नही पडा। यदि भारत मे ऐसे दस साधु हो तो निश्चित रूप से भारत का पुनरुत्थान हो जाय।

जब मैं अपने डेरे से चला तो मुझे यह आशा नही थी कि मैं जिनका उपदेश सुनने जा रहा हूं वे इतने बडे ज्ञानी और इतने सुन्दर उपदेशक हैं। आज मेरा हृदय एक अभूतपूर्व आनन्द से प्रफुल्लित हो रहा है। मैं जीवन भर इस सुन्दर उपदेश को नही भूलूंगा।

श्री विनोबा भावे

सवत् १९९१ मे जलगाव चातुर्मास के अवसर पर श्री विनोबा भावे आचार्यश्री का सत्सग करने पधारे। उस समय विनोबा जी तीन-चार दिन तक आपके साथ रहे तथा तत्त्व-चर्चा के मधुर रस का आस्वादन किया।

श्री जमनालाल बजाज

इसी चातुर्मास मे प्रमुख राष्ट्र-सेवी सेठ श्री जमनालाल बजाज भी आचार्य श्री के दर्शन करने व उनका सत्सग करने उपस्थित हुए।

सर मनुभाई मेहता

श्री मेहता बीकानेर राज्य में प्रधान मन्त्री थे। लन्दन मे प्रथम गोलमेज कान्फ्रेन्स में आपने देश क प्रतिनिधित्व किया। संवत् १६८४ में आचार्य श्री वे भीनासर-बीकानेर में चातुर्मास के समय आप उनर्क प्रवचन शैली और व्यक्तित्व तथा विद्वत्ता से इतने प्रभा वित हुए कि उनके विशिष्ट श्रद्धालु बन गए। अनेक बार आप सपरिवार आचार्य श्री के प्रवचनों में उप स्थित हुए। गोलमेज कान्फ्रेंस में भाग लेने जाने वे अवसर पर भी आप आचार्य श्री के पास मंगल प्रवचन एवं मार्गदर्शन लेने आए।

श्री रामनरेश त्रिपाठी

हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि और लोकसाहित्य के अध्येता विद्वान् श्री रामनरेश त्रिपाठी फतहपुर (राज-स्थान) में आचार्य श्री के सम्पर्क में आए और उनके श्रद्धालु बन गए। संवत् १६८७ मे पूज्य श्री के बीकानेर चातुर्मास के अवसर पर आपने उपस्थित होकर अनेक प्रवचन सुनने का लाभ उठाया। पश्चात् हिन्दी की प्रसिद्ध पत्रिका 'सरस्वती' मे उन्होने एक लेख प्रकाशित किया जिसकी कुछ पंक्तियां यहां उद्धृत हैं—"गत वर्ष फतहपुर

में श्री जवाहरलाल जी महाराज से मेरा साक्षात्कार हुआ था। उनका चरित्र बहुत ही अच्छा, पवित्र और तपस्या से पूर्ण है। वे अच्छे विद्वान, निरभिमानी, उदार, सहृदय और निस्पृह हैं। .... । उनके व्याख्यान में सामयिकता रहती है। .... वे बड़े निर्भय-वक्ता हैं, पर अप्रियवादी नही।"

काका कालेलकर एवं बुखारी बन्धु

आचार्य श्री ने सवत् १९८८ मे देहली मे चातुर्मास किया। इस चातुर्मास काल मे उनके प्रभावशाली व्याख्यानो ने उन्हें शीघ्र ही देहली की जैन-जैनेतर जनता मे प्रिय बना दिया। अनेक हिन्दू व मुस्लिम राष्ट्रीय नेता भी आपके विचारो से प्रेरणा लेने व्याख्यानो मे उपस्थित होते। प्रसिद्ध विचारक विद्वान् काका कालेलकर भी आपके प्रवचन मे उपस्थित हुए और आपके राष्ट्रोन्नति सम्बन्धी विचार सुन कर अत्यधिक प्रसन्नता व्यक्त की। इसी प्रकार काग्रेस के तत्कालीन प्रसिद्ध नेता शेख अताउल्लाशाह बुखारी और उनके भाई हबीबुल्लाशाह बुखारी भी आपके व्याख्यान सुनने उपस्थित हुए। व्याख्यान के पश्चात् उन्होने मुक्तकठ से आचार्य श्री के उपदेशो की प्रशंसा की।

सरदार पटेल

संवत् १९९३ में राजकोट-चातुर्मास के अवसर पर १३ अक्टूबर को अपराह्न तीन बजे सरदार वल्लभ-भाई पटेल पूज्यश्री के दर्शनार्थ पधारे। सरदार पटेल का आगमन सुन कर जैनेतर जनता भी बड़ी संख्या में एकत्र हुई। आचार्य श्री के प्रवचन के बाद सरदार पटेल ने जनता को सम्बोधित करते हुए कहा—"आप लोग धन्य हैं, जिन्हे ऐसे महात्मा मिले हैं और जिनके नित्य ऐसे व्याख्यान सुनने को मिलते हैं। मगर यह सुनना तभी सफल है जब उपदेशों को जीवन मे उतारा जाय।"

पट्टाभि सीतारामय्या

संवत् १९९३ में राजकोट चातुर्मास के पश्चात् विहार करके जब आचार्य श्री पोरबन्दर विराज रहे थे तब वहां स्वतन्त्रता संग्राम-सेनानी प्रसिद्ध विद्वान् व प्रभावशाली वक्ता श्री पट्टाभि सीतारामय्या का आगमन हुआ। पूज्यश्री की ख्याति सुन कर आप दर्शनार्थ पधारे तथा पूज्यश्री से मिल कर व वार्तालाप कर बड़े प्रसन्न हुए।

श्री ठक्कर बापा तथा श्रीमती रामेश्वरी नेहरू

संवत् १९९४ में आचार्य श्री का चातुर्मास

नाम	दीक्षा संवत्	दीक्षा का स्थान
श्री केसरीमल जी म.	१९८०	घाटकोपर (बम्बई)
श्री चुन्नीलाल जी म.	१९८१	जलगांव
श्री वीरबल जी म.	१९८१	जलगाव
श्री सुगालचन्द जी म.	१९८३	ब्यावर
श्री रेखचन्द जी म.	१९८५	चूरू
श्री हमीरमल जी म	१९८५	चूरू
श्री चुन्नीलाल जी म.	१९८६	जोधपुर
श्री गोकुलचन्द जी म.	१९८६	जोधपुर
श्री मोतीलाल जी म.	१९८६	जैतारण
श्री फूलचन्द जी म.	१९९१	कपासन
सुश्री झम्मुबाई म.	१९९२	रतलाम
सुश्री सम्पतबाई म.	१९९२	रतलाम
श्री ईश्वरचन्द जी म.	१९९९	भीनासर
श्री नेमीचन्द जी म.	१९९९	भीनासर

आचार्य श्री के चातुर्मास

विक्रम संवत्	चातुर्मास स्थान
१९४९	धार

विक्रम संवत्	चातुर्मास स्थान
१९५०	रामपुरा
१९५१	जावरा
१९५२	थांदला
१९५३	शिवगढ
१९५४	सैलाना
१९५५	खाचरोद
१९५६	खाचरोद
१९५७	महीदपुर (उज्जैन)
१९५८	उदयपुर
१९५९	जोधपुर
१९६०	ब्यावर
१९६१	बीकानेर
१९६२	उदयपुर
१९६३	गगापुर
१९६४	रतलाम
१९६५	थांदला
१९६६	जावरा
१९६७	इन्दौर
१९६८	अहमदनगर
१९६९	जुन्नेर

विक्रम संवत्	चातुमास स्थान
१९७०	घोड़नदी
१९७१	जामगांव
१९७२	अहमदनगर
१९७३	घोड़नदी
१९७४	मीरी
१९७५	हिवडा
१९७६	उदयपुर
१९७७	बीकानेर
१९७८	रतलाम
१९७९	सतारा
१९८०	घाटकोपर (बम्बई)
१९८१	जलगांव
१९८२	जलगांव
१९८३	ब्यावर
१९८४	भीनासर
१९८५	सरदारशहर
१९८६	चूरू
१९८७	बीकानेर
१९८८	देहली
१९८९	जोधपुर

विक्रम सवत्	चातुर्मास स्थान
१९९०	उदयपुर
१९९१	कपासन
१९९२	रतलाम
१९९३	राजकोट
१९९४	जामनगर
१९९५	मोरवी
१९९६	अहमदाबाद
१९९७	वगडी
१९९८	भीनासर
१९९९	भीनासर

जीवन-कथा-क्रम : महत्वपूर्ण वर्ष

जन्म : कार्तिक शुक्ला ४, विक्रम संवत् १९३२
मुनि-दीक्षा : मार्गशीर्ष शुक्ला २, वि. सवत् १९४८
युवाचार्यत्व : चैत्र कृष्णा ९, सवत् १९७५
आचार्यत्व . आषाढ शुक्ला ३, सवत् १९७७
दीक्षा स्वर्ण-जयन्ती · मार्गशीर्ष शुक्ला २, वि स १९९८
स्वर्गारोहण · आषाढ शुक्ला ८, वि० सवत् २०००

★ ★

६ व्यक्तित्व

इतने बडे संसार में किसी व्यक्ति की क्या गिनती ? वह अनेक मे एक है। परन्तु कुछ व्यक्ति ऐसे होते है जो अपने गुणों और महत् कार्यों के कारण असाधारण बन जाते है। व्यक्ति जवाहर की श्रीमद् जवाहराचार्य बनने तक की कथा भी अनेक में विशिष्ट बनने व साधारण से असाधारण बनने की ही कथा है।

थांदला कस्बे का मातृ-पितृविहीन बालक जवाहर, जिसकी माता उसे दो वर्ष का छोड स्वर्ग सिधार गई, पांच वर्ष की वय होते-होते पिता का साया जिसका उठ गया, शिक्षा-दीक्षा भी जिसकी सामान्य से अधिक हो नही सकी, पर वह अपने क्रातिकारी व्यक्तित्व, दूरगामी दृष्टि और सयम-साधना के बल पर एक प्रभावशाली धर्माचार्य के रूप में लाखों लोगो की श्रद्धा व

भक्ति का केन्द्र वन गया । आचार्य श्री जवाहरलाल जी म० ने अपने जीवन-काल मे राजस्थान, मध्यप्रदेश गुजरात तथा महाराष्ट्र के विस्तृत भू-भाग में पद-विहार करके लोगो मे धार्मिक चेतना का सचार किया, अनेक सामाजिक कुरीतियो तथा अन्ध-विश्वासो से मुक्त कर अध्यात्म-आधारित स्वस्थ जीवन निर्माण की दिशा म उन्हे प्रेरित किया अछूतो तथा महिलाओं के उद्धार के लिए कई रचनात्मक कार्यक्रम सुझावे, पशुवध पशुवलि के विरुद्ध लोगो को भावनात्मक स्तर पर जागरूक किया, उनके अहिसा व राष्ट्रीय स्वतन्त्रता विपयक उद्बोधनो एव अल्पारम्भ महारम्भ की सम्यक् व्याख्याओ से देश मे राष्ट्रीय चेतना एव स्वदेशी वस्तुओ के प्रति ललक पैदा हुई । उनके प्रवचनों से प्रभावित होकर राष्ट्र के विविध क्षेत्रो मे कई लोक-कल्याणकारी सस्थाओ के निर्माण की भूमिका तैयार हुई ।

उनकी पहुंच रक से राजा, गरीब से अमीर और सामान्य जन से विशिष्ट व्यक्तियों तक थी । जहां महात्मा गाधी, लोकमान्य तिलक, महामना मालवीय, सरदार पटेल, विनोवा भावे जैसे राष्ट्रीय स्तर के विशिष्ट व्यक्तियो को उन्होने अपने व्यक्तित्व और कृतित्व से प्रभावित किया, वही अनेक राजाओ, नवाबों,

दृढ निश्चयी थे । चाहे घटना वाल्यावस्था मे पहाडी ढलान पर से गाडी के लुढकने की हो (देखिए प्रथम अध्याय विकट परिस्थिति मे सूझबूझ और साहस शीर्षक), चाहे विरक्त होकर सन्यास ग्रहण करने का निश्चय हो अथवा बिना वेहोश हुए, बिना उफ किए आपरेशन कराने की बात हो (देखिये तृतीय अध्याय 'रोग का आक्रमण' शीर्षक) सभी स्थितियों मे उन्होने साहस, सूझबूझ, अगाध धैर्य और असीम सहनशीलता का परिचय दिया ।

आचार्य श्री विकट परिस्थितियो मे जहां वज्रादपि कठोर थे वहा दलितों, पीडितो के प्रति फूल से कोमल थे । उनका हृदय करुणा का निर्झर था । सवत् १ ७५ के भयकर दुष्काल तथा इन्फ्लूएंजा के प्रकोप के समय, जिस किसी ने भी उन्हे अपने साथी साधुओ की स्वयं तन-मन से सेवा करते और अपने उपदेशो के द्वारा लोकमानस को पीडित लोगो की सहायता के लिए आत्मानुभूति की प्रेरणा करते देखा है, वह उनकी करुणा, उनकी वत्सलता और उनके सेवाभावी परदुखकातर व्यक्तित्व से अभिभूत हुए बिना नही रहा । जीव मात्र के प्रति उनकी दया व करुणा के साकार प्रतीक, सार्वजनिक जीवदया मण्डल घाटकोपर (वम्बई), मोरी आदि स्थानो पर स्थापित

गौशालाएं है ।

एक धर्माचार्य होते हुए भी उनका प्रगाढ राष्ट्र-प्रेम व स्वदेशी आन्दोलन के प्रति संयमित निष्ठा उनके व्यक्तित्व का उज्ज्वलतम पक्ष है । राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के अत्यधिक विषम दिनों में उन्होने धर्माचार्य के आसन से देश की स्वतन्त्रता को प्रबल अभिव्यक्ति दी । उनका कहना था–परतन्त्रता पाप है । परतन्त्र व्यक्ति ठीक प्रकार से धर्म की आराधना भी नही कर सकता । स्वदेशी वस्तुओं के प्रति अपने कर्त्तव्य का भान कराते हुए उन्होने कहा–तुम जिस देश मे जन्मे हो, वहा के अन्न, जल और वायु से तुम्हारे शरीर का पालन–पोषण हुआ है, उसी देश मे उत्पन्न होने वाली वस्तुओ के अतिरिक्त तुम्हे दूसरी वस्तुओ का त्याग करना चाहिए ।

वे बडे प्रभावक वक्ता थे । जिसने भी उनकी ओजस्वी वाणी, प्रेरक विचार सुने, वह सदा-सर्वदा के लिए उनका प्रशंसक बन गया, उनका भक्त हो गया। वे निर्भय वक्ता थे परन्तु अप्रियवादी नही थे । उनके प्रवचन सकीर्ण साम्प्रदायिकता से मुक्त व सार्वजनिक होते थे । यही कारण था कि उनके प्रवचनो मे जैन-अजैन, हिन्दू–मुस्लिम, सवर्ण–असवर्ण, भले- बुरे, राजा–

रत सभी की भीड बनी रहती थी । राजकोट (गुजरात) का एक प्रसग इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। भावनगर के एक वोहरा सज्जन अपने मित्र के अत्यधिक आग्रह और आचार्य श्री के प्रवचन की अत्यधिक प्रशसा सुनने के बाद तीसरे दिन आचार्य श्री के प्रवचन मे उपस्थित हुए । जैसे ही उन्होने उनकी प्रभावक वाणी सुनी, वे चकित हो गए । कहां तो वे सभी साधुओ को ढोगी मानते थे और उनका मानना था कि भारत मे गाधी जी के अतिरिक्त कोई सच्चा महात्मा ही नही है, कहां वे आचार्य श्री के प्रति भक्तिभाव से अभिभूत हो, अत्यधिक भावावेश मे उनसे निवेदन करने लगे–महाराज ! मैं बडे घाटे मे आ गया । तीन दिन से राजकोट मे हूँ और आज ही उपदेश सुन पाया । दो दिन मेरे वृथा चले गये । अब इस घाटे की पूर्ति करनी होगी और वह इस तरह कि आप भावनगर पधारें। भावनगर की जनता को आपका लाभ दिलवाऊंगा और मैं स्वय भी लूंगा । आप जैसे सत बडे भाग्य से मिलते हैं । मैं अच्छी तकदीर लेकर आया था कि आपके दर्शन हो गए । एक अजैन, कट्टर विरोधी व्यक्ति के आचार्य श्री के एक ही प्रवचन सुनने के बाद प्रकट किए गए ये उद्गार, उनकी वाणी के जादू के सच्चे उद्घोषक हैं ।

आचार्य श्री सभी प्रकार के पद-प्रलोभन, निन्दा-स्तुति, मान-अपमान से ऊपर अपनी आत्मा की मस्ती मे ही विचरण करने वाले व्यक्ति थे। वे महान् तपस्वी और सच्चे साधक साधु पुरुष थे। वे सभी प्रकार की संकीर्णता से परे थे। जैनियों की साम्प्रदायिक एकता के प्रबल पक्षधर थे। उनकी वीर संघ की योजना[1] उनके परिपक्व अनुभव, व्यावहारिकता और सूझबूझ का उदाहरण है। अनेक गुणो से मण्डित उनका व्यक्तित्व समग्र प्रभाव छोडने वाला था। उनके महाप्रस्थान के दुखद अवसर पर प्रेषित अनेकानेक श्रद्धाञ्जलियो मे उनके समकालीन सम्पर्क-सान्निध्य मे आने वाले साधुओ, राजपुरुषों, कवियों-लेखकों आदि ने उनके व्यक्तित्व के सम्बन्ध में जो उद्गार प्रगट किए हैं उनमे से कतिपय अश यहां उद्धृत किए जा हैं। इससे उनके प्रभावक व्यक्तित्व की एक झाकी मिल सकेगी।

---

१. काल की अपरिपक्वता के कारण यह योजना उस समय क्रियान्वित न हो सकी। अव आचार्य श्री के जन्म-शताब्दी-वर्ष मे कार्तिक शुक्ला चतुर्थी सं० २०३२ तदनुसार ७ नवम्बर, १९७५ को देशनोक मे समतादर्शन के प्रणेता आचार्य श्री नानालाल जी म सा. के सान्निध्य मे इस योजना

पूज्य श्री का साहित्य 'जीवन साहित्य' है। उसने सुप्त समाज मे जागरण पैदा किया है। साधु-धर्म और गृहस्थ धर्म के पृथक्करण मे वास्तविक मार्ग का प्रदर्शन किया है। वर्तमान बीसवी शताब्दी मे, जैन आचारो का महत्त्व यदि किसी ने नवीन दृष्टि-कोण से ससार के सामने रखा है और साथ ही पुरातन सस्कृति का भी सरक्षण किया है तो वह पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज हैं। उन्हे जितना भूतकाल का पता है, उतना ही वर्तमान काल का पता है और इन सब से बढ कर पता है भविष्य काल का। अत-एव आप समाज की प्रत्येक परिस्थिति का एक चतुर वैद्य की भांति निदान करते हुए हमारे सामने उस परिस्थिति के उपचार और परिचालन का आदर्श उप-स्थित करते हैं। वर्तमान जैन समाज के पूज्य श्री बहुत बडे आध्यात्मिक वैद्य हैं जिनकी चिकित्सा-प्रणाली अमोघ है, जिनके अहिंसा और सत्य के प्रयोगों से हजारो दुष्कर्म दूषित आत्माए आध्यात्मिक

का शुभारम्भ किया जा चुका है। इस योजना के परिचय के लिए इस पुस्तक का परिशिष्ट देखिए।

स्वास्थ्य प्राप्त कर चुकी है ।

—पूज्य श्री पृथ्वीचन्द्रजी म०

(२)

नि सन्देह पूज्य श्री जवाहरलाल जी इस समय के आचार्यों में एक श्रेष्ठ और मानवीय आचार्य है जिनके उपदेश से श्री जैन संघ में बहुत सी उन्नति हुई है और इस समय जैन साहित्य में जो सुन्दर-सुन्दर पुस्तके उपलब्ध हो रही हैं, उनका सारा यश इन्हीं पूज्य श्री को है ।

— महास्थविर गणि श्री उदयचन्दजी म०

(३)

आपकी भाषण शैली बडी ही चमत्कृतिपूर्ण है। जिस किसी भी विषय को उठाते हैं, आदि से अन्त तक उसे ऐसा चित्रित करते है कि जनता मन्त्रमुग्ध हो जाती है । चार-चार, पाच-पाच हजार जनता के मध्य आपका गम्भीर स्वर गरजता रहता है और बिना किसी शोरोगुल के श्रोता दत्तचित्त से एक-टक ध्यान लगाए सुनते रहते हैं । बड़ी से बड़ी परिषद् पर आप कुछ ही क्षणो मे नियन्त्रण कर लेते हैं । आपके श्रीमुख से वाणी का वह अखण्ड प्रवाह प्रवाहित होता है कि बिना किसी विराम के, बिना किसी परिवर्तन

के, बिना किसी खेद के, बिना किसी अरुचि के, निर-
तर अधिकाधिक ओजस्वी, गम्भीर, रहस्यमय एवं
प्रभावोत्पादक होता जाता है। व्याख्यान मे कही पर
भी भाव और भाषा का सामजस्य टूटने नही पाता।
प्राचीन कथानको के वर्णन का ढंग, आपका ऐसा अनु-
पम एव सुरुचिपूर्ण है कि हजार-हजार वर्षों के जीर्ण-
शीर्ण कथानको मे नव जीवन पैदा हो जाता है।
आपकी विचारधारा आध्यात्मिक, तीक्ष्ण, सूक्ष्म एवं
गम्भीर होती है। सहसा किसी व्यक्ति का साहस नही
पडता कि आपके विचारो की गुरुता को किसी प्रकार
हल्का कर सके या उसे छिन्न-भिन्न कर सके। आपका
कल्पनाशील मस्तिष्क विचारो की इतनी अच्छी उर्वरा
भूमि है कि प्रत्येक व्याख्यान मे नए विचार, नए से
नया आदर्श, नए से नया सकल्प उपस्थित होता है।

—आचार्य श्री आत्मारामजी म एवं
कविरत्न उपाध्याय श्री अमर मुनि जी म.

(४)

आप धीर, वीर और प्रभावक तथा प्राचीनता
का न्याय युक्ति से शोधन करने वाले हैं। आपकी
उपदेश शैली स्था० समाज मे आदर्श समझी जाती
है। आपके प्रवचन क्रान्तिकारी एवं सुधार के विचार

को लिए रहते हैं। इन उपदेशों ने जिस सम्प्रदाय के आप आचार्य हैं, उसमे ही नही, किन्तु स्था० समाज मे क्रान्ति की लहर उत्पन्न कर दी है।

—आचार्य श्री हस्तीमलजी म.

(५)

पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज अपने समाज के उज्ज्वल रत्न हैं। आपके अध्ययन मे गभीरता है, भावो में विशदता है, विचारों में विशालता है। यही नही, आपका वक्तृत्व भी प्रभावशाली, विशुद्ध, व्यापक और युगानुसारी है। भाषा में सरलता, सयतता और अलङ्कृति है। शैली प्रवाहमयी, रसोद्भिन्न और प्रौढ है।

—मुनि श्री मिश्रीमल्लजी 'मधुकर'

(६)

पराक्रमियो की पाशविक शक्ति अपने भय द्वारा लोगो से अपने सामने अपनी आज्ञा आज भी मनवा सकती है, परन्तु गाय-बछडे की भांति अपने पीछे लोगो को रखने वाली सत्पुरुषों की दैवी शक्ति और उनकी विश्व प्रेम की भावना ही है। हम आज "जैन जवाहर" का इस हेतु अनुसरण कर सकते हैं कि उनके

सहारे से अपने भक्त हृदय को विकसित कर उनके साथ आत्मविकास कर सकें।

— महासती श्री उज्ज्वल कंवर जी म०

(७)

आचार्य श्री जवाहरलाल जी मे महान् दार्शनिक तत्त्वो को ऐसी सरल भाषा मे प्रकट करने की कला है जिसे साधारण जनता भी आसानी से समझ सकती है। देश के विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायो मे रहे हुए सत्य के प्रति आपके उदार सहानुभूति-पूर्ण विचार हैं। विवाद अथवा चर्चा वाले विषय को सहनशीलता एवं न्याय के साथ प्रकट करने का आपका ढग बहुत प्रशंसनीय है।

—सर मनुभाई मेहता
तत्कालीन प्रधान मंत्री, वीकानेर राज्य

(८)

महाराज श्री जवाहरलाल जी महान् उपदेशक ही नही, किन्तु महान् आत्मा हैं। आपकी सहानुभूति जैन साधु सस्था या सिद्धान्तो तक ही सीमित नही है किन्तु उनके वाहर भी दूर तक फैली हुई है। मेरी

कामना है कि भारतवर्ष में पूज्य श्री के समान बहुत से धर्मोपदेशक हों जिससे साम्प्रदायिक कटुता दूर हो जावे । आपके परिचय में आने के बाद मैं अपने व्यक्तित्व को कुछ उन्नत अनुभव कर रहा हूं ।

—श्री त्रिभुवन जे. राजा

तत्कालीन प्रधानमंत्री, रतलाम स्टेट

(९)

उनकी विद्वत्ता, भावप्रवणता, वाग्धारा एव व्याख्यान तथा अभिव्यञ्जना की सरसता ने मुझे बहुत प्रभावित किया है । अपने अनुयायियों के हित की तीव्र भावना से प्रेरित होकर वे सामाजिक कार्यों में बड़ी रुचि लेते हैं ।

—राव साहब श्री अमृतलाल टी. मेहता

भूतपूर्व दीवान पोरबन्दर, लीमड़ी और धर्मपुर स्टेट

(१०)

महात्माश्री पोते जैन धर्मना आचार्य महापंडित छे महान् उपदेशक छे । परन्तु पोताना व्याख्यान मां सर्वधर्म मां थी बोधिक दाखला दृष्टान्तों आपी सर्वधर्म नु सरखापणु बतानी श्रोताजनो मां दुनियाना सर्वधर्मो

आदर करने वाले महापुरुष हैं। कलहपूर्ण विचार आपको पसन्द नही है।

—काजी ए. अख्तर, जागीरदार
जूनागढ स्टेट

(१२)

चरित्रगठन, तपोबल, आदर्श धर्म दृढता, संयमशीलता, शास्त्र–निपुणता एवं विद्वत्ता आपके प्रवचन-श्रवण के पहले ही प्रथम दर्शन–मात्र से दर्शक को हृदयंगम होकर उसे प्रभावित कर देते है। यदि ऐसे सौ–पचास महात्मा भी इस समय विद्यमान होकर देश सेवा, समाज–सेवा एवं धर्म–प्रसार में अपना सर्वस्व लगा दे तो गृह, समाज एवं राष्ट्र का महान उद्धार होकर उन्नत दशा की प्राप्ति अवश्यमेव सुलभ हो सकती है।

— मेहता तेजसिंह कोठारी,
तत्कालीन जिलाधीश, उदयपुर।

(१३)

महाराज श्री की हम कितनी प्रसंसा करें? प्रतिभाशाली देह, मधुर–वाणी, तेजस्वी मुखारविन्द, गद्यपद्य

(१५)

कथा कहने की उनकी शैली निराली थी। साधारण कथानक में वे जान डाल देते थे। उसमें जादू-सा चमत्कार आ जाता था। उन्होंने अपनी सुन्दरतर शैली, प्रतिभामयी भावुकता एवं विशाल अनुभव की सहायता से कितने ही कथ पात्रो को भाग्यवान बना दिया है। वे प्रायः पुराणों और इतिहास में वर्णित कथाओं का ही प्रवचन करते थे पर अनेकों वार सुनी हुई कथा भी उनके मुख से एकदम मौलिक और अश्रुतपूर्व-सी जान पड़ती थी।

— **पं० शोभाचन्द भारिल्ल,**
ब्यावर

(१६)

आचार्य श्री की प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। राष्ट्रीय सामाजिक, आध्यात्मिक, नैतिक अथवा व्यावहारिक ऐसा कोई भी विषय नही है जिस पर आपने अधिकारपूर्ण विवेचन न किया हो। आपकी वाणी में जादू था। बिलकुल साधारण-सी बात को प्रभावशाली एव रोचक बनाने मे आप सिद्धहस्त थे। सभी धर्म तथा सभी सिद्धान्तो का समन्वय करके नवनीत निकालने की कला

अद्भुत रूप से विद्यमान थी । जीवन कला के आप महान कलाकार थे । वैयक्तिक तथा सामाजिक, राष्ट्रीय तथा धार्मिक सभी क्षेत्रों में आपकी कला अव्याहत थी। आपके उपदेश सभी मार्गों के संगम स्थल थे ।

— डा० इन्द्रचन्द्र शास्त्री,
दिल्ली

(१७)

लम्बा कद, गौर वर्ण, विशाल भाल, तेजोमय सुदीर्घ नैत्र, चमकता हुआ ललाट, दीर्घ मस्तक, मुख-मण्डल की अपूर्व कांति, ये सब पूज्य श्री के भौतिक शरीर की उत्कृष्टता को सूचित करते थे । उनकी उत्कृष्ट शारीरिक सम्पदा, देखने वाले एक अनजान व्यक्ति को भी एकदम प्रभावित किये बिना न रहती थी । उनकी आवाज बडी बुलन्द थी । जब वे व्याख्यान मण्डप मे बैठ कर व्याख्यान फरमाते थे तब ऐसा प्रतीत होता था मानो कोई सिह गर्जना कर रहा हो। जो व्यक्ति एक वक्त उनके दर्शन कर लेता था उसके हृदय पर उनकी तेजोमय सौम्य मूर्ति की छाप सदा के लिए अमिट हो जाती थी । वह उन्हे कभी भूलता न था। जो एक वक्त उनका व्याख्यान श्रवण कर लेता था वह सदा के लिए उनका श्रद्धालु भक्त बन जाता

था । उनके व्याख्यान में जादू की सी शक्ति थी। उनका व्याख्यान तात्त्विक होता था। उसमें शब्दाडम्बर नही होता था । वे शब्दो की आत्मा को पकड़ते थे और उसमें गहरे उतर कर तत्त्व-विश्लेषण-पूर्वक विचार करते थे । गहन से गहन तत्त्वों की थाह लेने की उनमे क्षमता थी। उनमे ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूप रत्नत्रय का त्रिवेणी सगम था ।

— पं० घेवरचन्द बांठिया 'वीरपुत्र'

(१८)

नर देह में वह देव था, सिद्धांत का वह भक्त था ।
व्यवहार में वह दक्ष था, कर्त्तव्य पर आसक्त था ।।
उसमे सभा-चातुर्य था, वह वाक् पटुता का धनी ।
अति ओज वाणी मे भरा था, शान उसकी थी घनी ।।
प्रभविष्णुता उसमे अलौकिक, ज्ञान का भण्डार था ।
निर्भीक तार्किक, शास्त्रज्ञाता, शील का अवतार था ।।

— श्री तारानाथ रावल

(१९)

जो सदाचार के उदयाचल, दुर्व्यसन-तिमिर के भास्कर थे,
सताप हरण, मृदुवचन, शांति में, जो अकलंक सुधाकर थे।
जो कटुवाद-कुहेस दिवस थे, धर्म वीरता में बे-जोड़,

पूज्यपाद वे आज जवाहर, कहां गए भक्तों को छोड़ ॥

— श्री त्रिलोकीनाथ मिश्र

(२०)

दिव्यं धर्म दिवाकर कलियुगे व्याप्तेऽपि विद्योतयन्,
पाखण्डं परिखण्डयन् प्रतिदिनं सम्मण्डयन् सज्जनान् ।
कारुण्यं समुपादिशश्च निरतं विद्यां परां वर्धयन्,
श्री जैनेन्द्र जवाहर यतिवरो जीव्याज्जगत्यां चिरम् ॥

— श्री गजानन्द शास्त्री

(२१)

हम सबके पथ में प्रभुवर तुम,
ज्ञान प्रदीप सजग करते ।
हम सबको धर्मामृत देकर,
तुम सत्पथ पर ले बढ़ते ॥

— केशरीचन्द सेठिया, मद्रास ।

परिशिष्ट —१

वीर संघ योजना

धर्मप्रधान भारत के आध्यात्मिक आकाश के प्रकाश-स्तंभ, युगद्रष्टा, युगस्त्रष्टा, युग प्रर्वतक, ज्योतिर्धर जैनाचार्य स्व. श्री जवाहरलाल जी म सा. ने अपनी उद्‌बोधक प्रवचन शृंखलाओं में सद्‌गुणो के प्रचार-प्रसार एवं संयम साधना के निखार हेतु एक महान् योजना प्रस्तुत की थी। भगवान् महावीर के साधना-मार्ग को प्रशस्त बनाने वाली इस जीवनोन्नायक मध्यम-मार्गीय साधनायुक्त प्रचार-योजना का वीर-निर्वाण के ऐतिहासिक वर्ष में 'वीर संघ योजना' के नाम से क्रियान्वयन प्रारंभ कर दिया गया है।

'वीर संघ योजना' इन चार आधारभूत स्तभों पर आधारित है—१ निवृत्ति, २. स्वाध्याय, ३ साधना और ४. सेवा।

साधना के स्तर पर वीर संघ के सदस्यों की तीन श्रेणियां हैं—

१—उपासक सदस्य

उपासक सदस्य अपने परिवार एवं व्यवसाय से

आशिक निवृत्ति लेकर प्रतिदिन सामायिकपूर्वक स्वाध्याय एव व्रत प्रत्याख्यानपूर्वक साधना करते हुए निष्काम भाव से सेवारत होने का निरन्तर अभ्यास करेंगे ।

२—साधक सदस्य

साधक सदस्य उपासक सदस्यों से साधना के क्षेत्र मे विशिष्ट होगे । वे पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करेंगे और पारिवारिक तथा व्यावहारिक उत्तरदायित्वों से पूर्ण निवृत्त न हो पाने के कारण आशिक निवृत्ति के साथ ही स्वाध्याय तथा सेवा के क्षेत्र मे भी उपासक सदस्यो से अधिक समय देंगे ।

३—मुमुक्षु सदस्य

मुमुक्षु सदस्य परम पूज्य श्री जवाहराचार्य जी म सा. के मूल स्वप्न को साकार बनाने वाले गृहस्थ एव साधुवर्ग के बीच की कडी होंगे । वे एक प्रकार से तीसरे आश्रम—वानप्रस्थ के तुल्य साधनायुक्त जीवन के साथ धर्म-प्रचार की प्रवृत्तियो का संचालन करेंगे । उनकी गृहस्थ-जीवन से लगभग पूर्ण निवृत्ति होगी । वे परिवार एव गृहस्थ के साथ रहते हुए भी पारिवारिक उत्तरदायित्वो से विरत-अनासक्त व्रती श्रावक के रूप में साधना व सेवाकार्यों मे सर्वभावेन रत रहेंगे ।

भावना के स्तर पर वे गृहस्थ से दूर एवं साधुत्व के समीप रहेगे । उनका जीवन स्वाध्याय, साधना और सेवा से ओतप्रोत होगा । समाजसेवा एवं धर्म प्रभावना के लिए वे आवश्यकतानुसार देश-विदेश का प्रवास भी करेंगे । वे श्रावक वर्ग की उच्चस्थ स्थिति के आदर्श-स्वरूप होंगे ।

परिशिष्ट—२

श्रीमद् जवाहराचार्य विरचित साहित्य

(श्री जवाहर साहित्य समिति, भीनासर द्वारा प्रकाशित)

जवाहर किरणावली ।

प्रथम किरण	—	दिव्यदान	३.७५ पैं०
द्वितीय „	—	दिव्य जीवन	४.०० „
तृतीय „	—	दिव्य संदेश	२.०० „
चतुर्थ „	—	जीवन धर्म	४.७५ „
पांचवीं „	—	सुबाहुकुमार	२.५० „
सातवीं „	—	जवाहर स्मारक, प्रथम पुष्प	३.०० „
आठवीं „	—	सम्यक्त्व पराक्रम, प्रथम भाग	२ ५० „
नवीं „	—	„ „ द्वितीय भाग	२.५० „
दसवीं „	—	„ „ तृतीय भाग	२ ५० „
ग्यारहवीं „	—	„ „ चतुर्थ भाग	३.७५ „
बारहवी „	—	„ „ पंचम भाग	
सतरहवीं „	—	पाण्डव-चरित्र, प्रथम भाग	१ ७५ „
अठारहवीं „	—	„ „ द्वितीय भाग	१ ७५ „
उन्नीसवीं „	—	बीकानेर के व्याख्यान	२ ७५ „
इक्कीसवीं „	—	मोरवी के व्याख्यान	२.०० „
बाईसवीं „	—	सम्वत्सरी	२.०० „
तेईसवीं „	—	जामनगर के व्याख्यान	२.०० „

चौबीसवी किरण	—	प्रार्थना प्रबोध	३.७५ पैसे
पच्चीसवीं ,,	—	उदाहरणमाला, प्रथम भाग	२.०० ,,
छब्बीसवी ,,	—	उदाहरणमाला, द्वितीय भाग	३.२५ ,,
सत्ताईसवीं ,,	—	,, ,, तृतीय भाग	२.२५ ,,
अट्ठाईसवीं ,,	—	नारी जीवन	२.२५ ,,
उनतीसवीं ,,	—	अनाथ भगवान्, प्रथम भाग	२.०० ,,
तीसवीं ,,	—	,, ,, द्वितीय भाग	१.५० ,,
सद्धर्म-मंडन			११.०० ,,

(श्री सम्यक्ज्ञान मंदिर, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित)

इकतीसवी किरण	—	गृहस्थ धर्म, प्रथम भाग	१.६२ पै०
बत्तीसवी किरण	—	,, ,, द्वितीय भाग	१ ७५ ,,
तेतीसवी किरण	—	,, ,, तृतीय भाग	१ ५० ,,

(श्री जैन जवाहर मित्र मंडल, ब्यावर द्वारा प्रकाशित)

तेरहवी किरण	—	धर्म और धर्म नायक	२.९० पै०
चौदहवीं ,,	—	राम वनगमन, प्रथम भाग	३.०० ,,
पन्द्रहवीं ,,	—	,, ,, द्वितीय भाग	३.०० ,,
चौतीसवीं ,,	—	सती राजमती	२.०० ,,
पैंतीसवीं ,,	—	सती मदनरेखा	२.७५ ,,

(श्री अ० भा० साधुमार्गी जैन संघ द्वारा प्रकाशित)

छठी किरण	—	रुक्मिणी विवाह	२.२५ पैसे
सोलहवी किरण	—	अजना	१.२५ ,,
बीसवी किरण	—	शालिभद्र चरित्र	२.२५ ,,

हरिश्चन्द्र तारा	२ ०० पैसे
जवाहर ज्योति	३ ०० „
चिन्तन-मनन-अनुशीलन, प्रथम भाग	१ ०० „
„ „ „ द्वितीय भाग	१.०० „

(श्री श्वे साधुमार्गी जैन हितकारिणी संस्था, बीकानेर द्वारा प्रकाशित)

जवाहर–विचार सार	२ ५० पैसे

(श्री जैन हितेच्छु श्रावक मंडल, रतलाम द्वारा प्रकाशित)

सेट १

ी भगवती सुत्र पर व्याख्यान, भाग ३	४ ०० पै०
„ „ „ „ ४	
„ „ „ „ ५	
„ „ „ „ ६	

ेट—२

ानुकम्पा–विचार, भाग १	२ ०० पैसे
„ „ „ २	

ेट—३

राजकोट के व्याख्यान, भाग १	२ ५० पैसे
„ „ „ „ २	
„ „ „ „ ३	

सेट—४

सम्यक्त्व-स्वरूप श्रावक के चार शिक्षाव्रत श्रावक के तीन गुणव्रत श्रावक का अस्तेयव्रत श्रावक का सत्यव्रत परिग्रह परिमाणव्रत	१.५० पैसे

सेट—५

तीर्थङ्कर चरित्र, प्रथम भाग ,, ,, द्वितीय भाग सकडाल पुत्र सनाथ-अनाथ निर्णय श्वेताम्बर तेरह पथ	२.५० पैसे

नोट—पूरे सेट लेने पर ११.०० में प्राप्त होंगे।

धर्म व्याख्या	१.२५ पैसे
सुदर्शन-चरित्र	२.२५ ,,
श्री सेठ धन्ना चरित्र	१.५० ,,

परिशिष्ट—३

हमारे अन्य महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

श्री गणेश स्मृति ग्रन्थमाला, बीकानेर

(परम पूज्य स्व. आचार्य श्री गणेशीलाल जी म. सा. के व्याख्यान)

जैन संस्कृति का राजमार्ग	२.५० पैसे
आत्म-दर्शन	१.५० ,,
नवीनता के अनुगामी (सम्यक्ज्ञान मंदिर, कलकत्ता का प्रकाशन)	१.२५ ,,
पूज्य गणेशाचार्य जीवन-चरित्र (अर्द्ध मूल्य)	५.०० ,,

(परम श्रद्धेय आचार्य श्री नानालाल जी म. सा. के प्रवचन)

पावस-प्रवचन, प्रथम भाग (जयपुर)	२.५० पैसे
,, ,, द्वितीय भाग ,,	२.५० ,,
,, ,, तृतीय भाग ,,	३.५० ,,
,, ,, चतुर्थ भाग ,,	५.०० ,,
,, ,, पांचवा भाग ,,	५.५० ,,
ताप और तप (मन्दसौर)	२.५० ,,
शांति के सोपान (ब्यावर)	३.२५ ,,
समता-दर्शन और व्यवहार	४.०० ,,

आध्यात्मिक वैभव (बीकानेर)	१.५० पैसे
आध्यात्मिक आलोक (बीकानेर)	१.५० ,,

विविध :

समता जीवन	०.५० ,,
समता-दर्शन, एक दिग्दर्शन	०.५० ,,
सौन्दर्य दर्शन (कथा-सग्रह) पाकेट बुक साइज	२.०० ,,
श्रीमद् जवाहराचार्य, जीवन और व्यक्तित्व (पाकेट बुक साइज)	२ ०० ,,

(पुरिरिर्वाण-वर्ष के उपलक्ष्य में संघ के विशेष प्रकाशन)

भगवान् महावीर, आधुनिक सदर्भ मे	४०.००

(सम्पादक-डॉ० नरेन्द्र भानावत)

Lord Mahavir & His Times (Dr. K. C Jain)	६०.००
Bhagwan Mahavir in the Relevence of Today (Dr. N. Bhanawat & Dr. P, S. Jain)	३०.००

श्रीमद् जवाहराचार्य सुगम पुस्तकमाला

प्रकाशन-योजना

१, श्रीमद् जवाहराचार्य : जीवन और व्यक्तित्व
- डॉ० नरेन्द्र भानावत, महावीर कोटिया

२. श्रीमद् जवाहराचार्य : धर्म
- कन्हैयालाल लोढा

३ श्रीमद् जवाहराचार्य : समाज
- ओंकार पारीक

४ श्रीमद् जवाहराचार्य : राष्ट्रीयता
- डॉ० इन्दरराज बैद

५ श्रीमद् जवाहराचार्य : शिक्षा
- महावीर कोटिया

६. श्रीमद् जवाहराचार्य : नारी
- डॉ० शान्ता भानावत

७ श्रीमद् जवाहराचार्य : साहित्य
- डॉ० नरेन्द्र भानावत

८. श्रीमद् जवाहराचार्य : सूक्तिया
- डॉ० नरेन्द्र भानावत, कन्हैयालाल लोढ़ा